स्वदेशी पत्रिका

वर्ष–19, अंक–12, मार्गशीर्ष–पौष 2068, दिसम्बर 2011

संपादक
विक्रम उपाध्याय

कार्यालय
धर्मक्षेत्रा, सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग
रामकृष्णपुरम्, नयी
दिल्ली–110022
से प्रकाशित
दूरभाष : 011–26184595
स्वदेशी जागरण समिति की ओर से ईश्वर दास महाजन द्वारा कॉम्पीटेंट बाइन्डर्स (प्रिंटिंग यूनिट), नवीन शाहदरा, दिल्ली–32 से मुद्रित।

आवरण कथा-4

स्वदेशी जागरण मंच के कार्यकर्त्ताओं ने पूरे देश में जगह जगह प्रदर्शन किए और केंद्र सरकार को चेताया कि यदि देश को सबसे अधिक रोजगार उत्पन्न करने वाले खुदरा व्यापार क्षेत्र को विदेशी कंपनियों को सौंपा तो सड़क पर ईंट से ईंट बजा देंगे।

अनुक्रम

आवरण लेख
संसद ठप्प भारत बंद
सरकार का निकला दम /4

राष्ट्रीय सम्मेलन देवघर (झारखंड)
प्रस्ताव–1, 2, 3 और 4 /9–13

स्मरण
व्यर्थ न हो बलिदान (हुतात्म बाबू गेनू की संक्षिप्त जीवनी)
– मुकुंद गोरे /14

प्रतिक्रिया
रिटेल में विदेशी कंपनियों को अनमुति
– दीवान अमित अरोड़ा /16

चिंतन
खुदरा बाजार में विदेशी कंपनियों का प्रवेश
– डॉ. आशीष वशिष्ठ /18

कृषि
किसानों की त्रासदी
– देविन्दर शर्मा /21

सामयिकी
कैसे रूके रुपये का अवमूल्यन
– निरंकार सिंह /24

अर्थव्यवस्था
एक निराशाजनक नीति
– डॉ. भरत झुनझुनवाला /27

सुरक्षा
भारी कूटनीतिक भूल
– ब्रह्म चेलानी /29

पड़ताल : अमरीका डूबने की ओर. . .
– गिरीश अवस्थी /31

इतिहास और अब : शिक्षा से दूर होते विश्वविद्यालय
– उमेश प्रसाद सिंह /33

पर्यावरण : जलवायु परिवर्तन पर फिर बहस
– सुनीता नारायण /35

पाठकनामा /2

पाठकनामा

महंगाई सताने लगी अब

महंगाई पर स्वदेशी पत्रिका निरंतर कोई न कोई लेख अवश्य प्रकाशित करती रहती है लेकिन महंगाई को काबू करने वालों पर जूँ तक नहीं रेक रही है। आज पैट्रोल, डीजल, दाल, चावल, गेहूँ और आम जरूरत मंद चीजें दिन प्रति दिन बढ़ती ही जा रही है। आज प्राइवेट सर्विस करने वाले और छोटे–मोटे अपना रोजगार करने वाले इस महंगाई से काफी बुरी तरह ग्रस्त हो चुके है। अभी बीते माह एक युवक ने केंद्रीय मंत्री शरद पावर को चाटा जड़ दिया, इससे पहले उसने संचार मंत्री सुखराम को भी इसी युवक ने थप्पड़ मारा था। देखा जाए यह सिलसिला भारत में ही नहीं अन्य देशों में भी इसी प्रकार हुआ है। आखिर कारण क्या है? कोई व्यक्ति हमारे प्रिय नेताओं पर क्यों अपना गुस्सा इस प्रकार उतार रहे हैं। कायदे से यह होना चाहिए था कि आम आदमी चुनाव के दौरान इन नेताओं को वोट नहीं देता, परंतु लगता है कि अब आम आदमी का सब्र टूट गया है कि वो अब इन नेताओं से तंग आ चुका है। कारण स्पष्ट है – बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार, बढ़ती हुई महंगाई। हालांकि ऐसी घटनाएं उचित नहीं है परंतु जब सरकार ही कुछ न करे तो जनता क्या करे? अब नेताओं को समझ लेना चाहिए कि जल्द से जल्द उनको महंगाई पर आवश्यक कदम उठाने चाहिए।

– मनोज कुमार, शाहदरा, दिल्ली

पैट्रोल–डीजल पर गुमराह करती सरकारें

पैट्रोल महंगा हो रहा है और दूसरी तरफ इंडियन आयल और सरकारी तेल कंपनियों का मुनाफा करोड़ों में बढ़ रहा है। यह उचित है कि सरकारी कंपनियां भी कुछ प्रतिशत अतिरिक्त मूल्य पैदा करें। मगर क्या यह उनका काम नहीं है कि वे कीमतों को इस स्तर पर बनाए रखें जिससे जनसाधारण को दिक्कत न हो? क्या सिर्फ सरकार ही अपने फालतू खर्च घटाएगी या हमारे औद्योगिक दैत्यों के साहब लोग भी थोड़ा साधारण आदमी की तरह रहेंगे। जहां तक तेल की अंतरराष्ट्रीय कीमतों का सवाल है, उनमें कोई खास वृद्धि नहीं हुई है। सरकार को अब प्राइवेट गाड़ियों द्वारा मनचाही मात्रा में तेल पीने पर अंकुश लगाना चाहिए साथ ही लोगों को कहिए वे हवाई जहाज से कम चलें, रेल से ज्यादा। तेल पर, सरकार की बयानबाजी है कि डालर के मुकाबले रूपए की कीमत लगातार गिर रही है, जिसके कारण तेल की कीमत बढ रही है। क्या सभी केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों को तेल पर कम से कम टैक्स नहीं लगाया चाहिए। कब सरकार सोकर जागेगी, कब जनता को राहत मिलेगी – इसकी संभावना कब होगी यह किसी को पता नहीं। – राकेश कुमार दास, मीडिया अपार्टमेंट, गाजियाबाद

आवश्यक नहीं कि इस अंक के भीतर प्रस्तुत लेखकों के विचार स्वदेशी पत्रिका के संपादक मंडल के विचारों से मेल खाते हों। पाठकों की जानकारी के लिए उन्हें यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

संपादकीय कार्यालय

"धर्मक्षेत्र" शिव शक्ति मन्दिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

दूरभाष : 011–26184595 • ई–मेल : swadeshipatrika@rediffmail.com

अगर आप घर बैठे स्वदेशी पत्रिका चाहते हैं तो डिमांड ड्राफ्ट, मनीऑर्डर अथवा चेक द्वारा शुल्क *'स्वदेशी पत्रिका'* दिल्ली के नाम भेजने का कष्ट करें।

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 100 रुपए

आजीवन सदस्यता शुल्क: 1,000 रुपए

यदि शुल्क भेजने के उपरांत भी आपको पत्रिका समय पर उपलब्ध नहीं हो पा रही है तो तुरंत पत्रिका कार्यालय को सूचित करें।

(ध्यानार्थ : कृपया अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखें)

उन्होंने कहा

भाजपा ने खुदरा क्षेत्र में सीधे विदेशी निवेश का हमेशा विरोध किया है।

– लालकृष्ण आडवाणी

सरकार द्वारा विदेशी कंपनियों को देश में खुदरा व्यापार की अनुमति को देना मैं पूर्णता विरोध करती हूँ।

– ममता बनर्जी

हम अपने प्रदेश में विदेशी कंपनियों को खुदरा व्यापार में घुसने नहीं देंगे।

– मायावती

खुदरा व्यापार क्षेत्र में विदेशी निवेश देना सरकार द्वारा लाखों लोगों की रोजी–रोटी से खिलवाड़ करने जैसा है।

– राजकुमार भाटिया, व्यापारी, दिल्ली

संपादकीय

सावधान! संघर्ष अभी बाकी है

विदेशी कंपनियों को देश में खुदरा व्यापार करने की अनुमति देने के मंत्रिमंडलीय फैसले पर भले ही जन दबाव के कारण सरकार ने फिलहाल रोक लगा दी है, लेकिन अभी खतरा टला नहीं है। मनमोहन सिंह ने अपने कदम वापस सिर्फ इसलिए है कि उन्हें यह डर था कि यदि खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश को अनुमति देने के फैसले पर अड़े तो सरकार भी जा सकती थी। सिर्फ ममता बनर्जी ने ही कड़ा रुख नहीं दिखाया, बल्कि इस मुद्दे पर कांग्रेस भी दरकने लगी थी। सोनिया गांधी को अपनी ही पार्टी में बगावती तेवर वाले सांसद दिखाई पड़ने लगे थे। और फिर पूरा देश केबिनेट के फैसले के खिलाफ खड़ा हो चुका था। स्वदेशी जागरण मंच की आवाज पर दर्जनों संगठनों ने मिलकर एक दिन का पूरे भारत बंद का सफल आयोजन, सरकार को सोंचने पर मजबूर कर दिया। भाजपा समेत अन्य विपक्षी दलों द्वारा संसद को इस मुद्दे पर न चलने देने की रणनीति ने भी सरकार के हाथ पांव फुला दिए। प्रधानमंत्री के पास अपने तुगलकी फैसले को रोकने के अलावा कोई चारा नहीं था। पर सजग नागरिकों को एक बड़े आंदोलन के लिए तैयार रहना होगा क्योंकि कांग्रेस की केंद्र सरकार ने राजनीतिक विवशता के कारण सिर्फ इस मुद्दे पर फिलहाल एक कदम वापस खींचे हैं, उत्तर प्रदेश के विधानसभा चुनाव के बाद विदेशी कंपनियों को खुदरा व्यापार करने की अनुमति देने की एक और कोशिश हो सकती है। मनमोहन सिंह देश के नागरिकों से ज्यादा अमरीकी अधिकारियों को दिए अपने वचन को निभाने के प्रति ज्यादा संजीदा हैं। उन्होंने कहा भी था कि यदि इस फैसले को वापस लिया तो देश की बड़ी फजीहत हो जाएगी। स्वदेशी जागरण मंच लगातार आगाह करता आ रहा है कि अमरीका के दबाव में सरकार गुपचुप खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश को अनुमति देने की तैयारी कर रही है। केबिनेट नोट कई माह पहले ही तैयार कर कर लिया गया था, बस चुपके से उसे केबिनेट से पास कराने की जुगत में सरकार थी। और संरकार ने इसे पास भी फुल केबिनेट में नहीं कराया, तृणमूल कोटे के मंत्रियों की उपस्थिति के बगैर यह फैसला किया गया कि खुदरा व्यवापार में 51 फीसादी विदेशी निवेश को अनुमति दी जाएगी। कांग्रेस का यह फैसला न सिर्फ संघीय ढ़ांचा वाली सरकार के मूल आधार के विपरीत था, बल्कि यह गैर संवैधानिक भी था। खुदरा व्यापर राज्य सरकारों के अधिकार क्षेत्र में आता है। इस पर कोई भी केंद्रीय नीति थोपने के पहले केंद्र को राज्य सरकारों के साथ मिलकर एक सहमति बना लेनी चाहिए थी। लेकिन सहमति बनाने की बात तो दूर केंद्र ने इस पर राज्य सरकारों के साथ चर्चा करने की जरूरत भी नहीं समझी। यहीं नहीं इतने बड़े फैसले को लेने से पहले अन्य राजनीतिक दलों को भी भरोसे में नहीं लिया। इसे केंद्र की तुगलकी फैसला नहीं कहेंगे तो और क्या कहेंगे। कांग्रेस नेतृत्व को भी यह मालूम होना चाहिए था कि पांच करोड़ लोगों को रोजगार देने वाले खुदरा व्यापार पर यदि विदेशी कंपनियों को कब्जा देने की नीति लागू की गई तो देश में कोहराम मच जाएगा। अब इसे कांग्रेस का भोलापन कहिए या फिर जानबूझ कर देश को विदेशी कंपनियों के हवाले करने की उनकी मजबूरी, पर फैसले के लागू होने की स्थिति में देश को भारी कीमत चुकानी पड़ सकती थी। वालमार्ट सरीखी कंपनियों के स्टोर आते ही लोग भूखमरी के कगार पर आ सकते थे। जब थोड़ी सी जनसंख्या वाले देश में वालमार्ट बेरोजगारी दूर नही कर पा रही है तो भारत जैसे देश में जहां अब जनसंख्या 120 करोड़ पहुंच चुकी है, वहां उनके आने से बेरोजगारी दूर कैसे हो सकती है, जब यह तर्क कांग्रेस के लोग देते हैं कि विदेशी कंपनियों के खुदरा व्यापार के क्षेत्र में आने से किसानों का भला होगा, उपभोक्ताओं का भला होगा और निर्माण कंपनियों का भला होगा, तो उनके विवके पर तरस आती है। कांग्रेस को वाल मार्ट जैसी कंपनियों को अपने यहां लूट की छूट देने से पहले अमरीका और अन्य यूरोपीय में उनके कारनामे देख कर आना चाहिए। यही वालमार्ट है, जो अपने कर्मचारियों के स्वास्थ्य बीमा का पैसा देने से इनकार कर देती है, यही वालमार्ट है जो अपनी महिला कर्मचारियों के साथ लिंग भेद करती है। यही वालमार्ट है जो अपने ग्राहकों के साथ अभद्रता करती है, यहीं वह मालमार्ट है जो किसानों को किसानी से हटाकर बड़ी कॉरपोरेट को खेतों पर काबिज करवाती है, यही वालमार्ट है जो पैसे के बल पर देश की सत्ता को प्रभावित करती है, यह वही वाल मार्ट है जो स्थानीय रोजगार को तेजी से निगल जाती है। उसी वालमार्ट और टेस्को को लाने की कवायद यह कह कर की जा रही है कि उनके आने से यहां किसानों को लाभ होगा, रोजगार बढ़ेगा और उपभोक्ताओं को सस्ते सामान मिलेंगे। कांग्रेस को शायद यह मालूम नहीं कि हमारा खुदरा व्यापार सिर्फ आर्थिक गतिविधियों का उपक्रम नहीं है, बल्कि इससे सामाजिक सुरक्षा भी जुड़ा हुआ है। नागरिकों को भोजन उपलब्ध कराने, और उनकी छोटी मोटी जरूरतों को पूरा करने में जितनी भूमिका किसी सरकार की है उससे हजार गुना भूमिका छोटे और मझोले खुदरा दुकानदारों की है। आज भी तीसों दिन का भोजन उधार में सिर्फ और सिर्फ छोटे खुदरा व्यापारी ही देने की हिम्मत रखते हैं। किसी कॉरपोरेट या विदेशी कंपनी की हिम्मत नहीं कि दूरदराज में काम करने वाला मनीआर्डर भेज घर की अर्थव्यवस्था चलाने वाले किसी व्यक्ति के परिवार को खाद्यान्न सुरक्षा दे सके। खुदरा व्यापार गरीब जनता द्वारा गरीब जनता के लिए चलाया जाने वाला आर्थिक कम सामाजिक उपक्रम ज्यादा है इसे छिन्न भिन्न करने की किसी भी कोशिश का मुंहतोड़ जवाब दिया जाना चाहिए।

संसद ठप चक्का जाम

विदेशी कंपनियों का करेंगे जीना हराम

24 नवंबर को जब खुदरा व्यापार में 51 फीसदी विदेशी निवेश के प्रस्ताव को मंजूरी देने के लिए केबिनेट की बैठक चल रही थी, तभी राजनीतिक हलकों में इस बात को लेकर जबर्दस्त उबाल आने लगा था कि सरकार आखिर देश के भविष्य का फैसला अपने जिद और प्रधानमंत्री की व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा के आधार पर कैसे कर सकती थी। उस विपक्ष के लोग सत्ता में शामिल कई प्रमुख दलों के नेताओं के सम्पर्क में थे और इस बात के लिए उन्हें सावधान कर रहे थे कि देश हित विरोधी प्रस्ताव केबिनेट से पास न हो।

स्वदेशी जागरण मंच दिल्ली प्रांत के कार्यकर्ता प्रदर्शन करते हुए

24 नवंबर को जब खुदरा व्यापार में 51 फीसदी विदेशी निवेश के प्रस्ताव को मंजूरी देने के लिए केबिनेट की बैठक चल रही थी, तभी राजनीतिक हलकों में इस बात को लेकर जबर्दस्त उबाल आने लगा था कि सरकार आखिर देश के भविष्य का फैसला अपने जिद और प्रधानमंत्री की व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा के आधार पर कैसे कर सकती थी। उस विपक्ष के लोग सत्ता में शामिल कई प्रमुख दलों के नेताओं के सम्पर्क में थे और इस बात के लिए उन्हें सावधान कर रहे थे कि देश हित विरोधी प्रस्ताव केबिनेट से पास न हो। सत्ता गठबंधन में शामिल दो प्रमुख दलों को यह बात समझ में आई और उन्होंने खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश के प्रस्ताव का विरोध करना शुरू कर दिया। तृणमूल कांग्रेस और डीएम कोटे के मंत्रियों

ने सरकार के भीतर इस प्रस्ताव का जबर्दस्त विरोध किया, लेकिन प्रधानमंत्री स्वयं और कांग्रेस के मंत्रियों ने इस केबिनेट के प्रस्ताव को पास करा लिया। अपने इस तुगलकी फैसले को सही ठहराने के लिए कांग्रेस ने एक साथ कई प्रवक्ताओं को झोक दिया।

कांग्रेस लोगों को यह समझाने की कोशिश करती रही, सरकार के इस फैसले से न सिर्फ देश में नई पूंजी आएगी, बल्कि किसानों, गांवों और उपभोक्ताओं को जबर्दस्त फायदा होगा। वालमार्ट और टेस्को जैसी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के करतूतों से वाकिफ लोगों ने जब अपने तर्क सामने रखे तो सरकार की बोलती बंद हो गई। लगभग दो हफ्ते संसद ठप रही, व्यापारियों और दुकानदारों में जबर्दस्त गुस्सा भरने लगा।

अब बारी थी आंदोलन को नेतृत्व देने की, भारत और अमरीका दोनों सरकारों को यह बताने की, हम सोए हुए लोग नहीं हैं। हमारे ऊपर हमारे ही खिलाफ चीजें नहीं थोपी जा सकती। पिछले कई वर्षों से सरकार की मंशा को भांप उस पर नजर टिकाए स्वदेशी जागरण मंच ने देशहित को बलि चढ़ाने वाली कांग्रेस नेतृत्व वाली सरकार के इस फैसले के खिलाफ हल्ला बोलने की योजना तत्काल बनाई, भारतीय मजदूर संघ, किसान संघ,

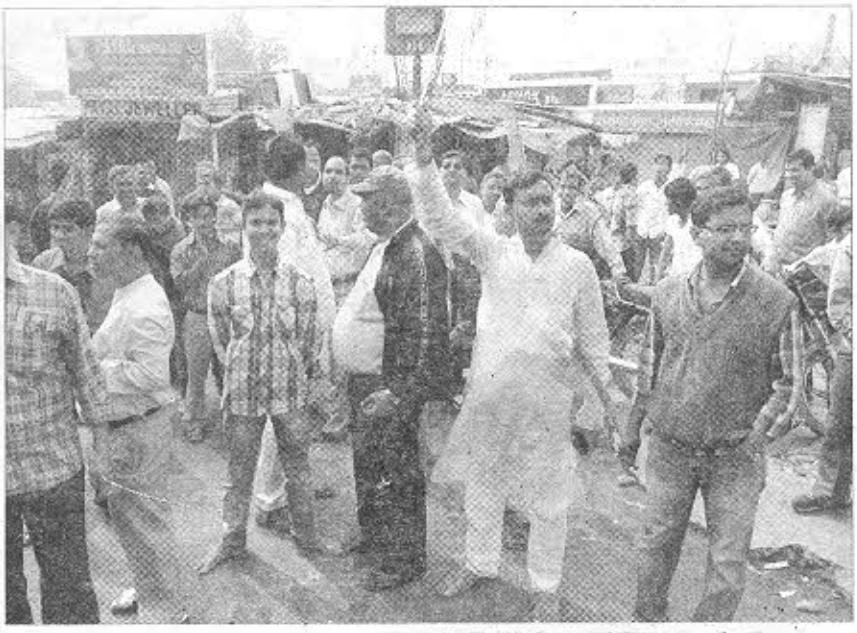

स्वदेशी जागरण मंच जमशेदपुर प्रांत के कार्यकर्ता प्रदर्शन करते हुए

व्यापारी संघ और अन्य सामाजिक संगठनों के साथ मंत्रणा कर देशव्यापी आंदोलन का कार्यक्रम तय किया। एक दिसंबर को भारत बंद का आयोजन किया गया। मंच की एक आवाज पर लाखों कारोबारियों ने बंद में हिस्सा लिया। सामान्य जन जीवन ठप हो गया। टीवी चैनलों ने पूरे दिन बंद पर कार्यक्रम चलाए। इस स्वतः स्फूर्त बंद को लगभग पांच करोड़ व्यावसायियों या व्यापारियों का समर्थन मिला।

अपनी अपनी राजनीतिक प्रतिबद्धताओं को परे रख लगभग सभी मजदूर संगठनों ने इस बंद को समर्थन दिया। भारतीय जनता पार्टी, तेलगुदेशम पार्टी और वामपंथी दलों ने भी इस बंद को सफल बनाने में अपनी पूरी ताकत झोक दी। छोटे ही नहीं बड़े व्यावसायिक प्रतिष्ठानों ने बंद में सहयोग किया। पश्चिम बंगाल, उत्तरप्रदेश, दिल्ली, गुजरात, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड और बाकी अन्य राज्यों ने भी केंद्र के इस इकतरफा फैसले के खिलाफ सड़क पर उतर विरोध जताया।

स्वदेशी जागरण मंच के कार्यकर्त्ताओं ने पूरे देश में जगह जगह प्रदर्शन किए और केंद्र सरकार को चेताया कि यदि देश को सबसे अधिक रोजगार उत्पन्न करने वाले खुदरा व्यापार क्षेत्र को विदेशी कंपनियों को सौंपा तो सड़क पर ईंट से ईंट बजा देंगे। मंच के कार्यकर्त्ताओं ने प्रधानमंत्री के खिलाफ जम कर नारे लगाए और टेस्को तथा वालमार्ट के पुतले फूंके। जहां–जहां भी विदेशी कंपनियों के स्टोर खुले हैं मंच ने वहां वहां जाकर

स्वदेशी जागरण मंच के कार्यकर्त्ताओं ने पूरे देश में जगह जगह प्रदर्शन किए और केंद्र सरकार को चेताया कि यदि देश को सबसे अधिक रोजगार उत्पन्न करने वाले खुदरा व्यापार क्षेत्र को विदेशी कंपनियों को सौंपा तो सड़क पर ईंट से ईंट बजा देंगे। मंच के कार्यकर्ताओं ने प्रधानमंत्री के खिलाफ जम कर नारे लगाए और टेस्को तथा वालमार्ट के पुतले फूंके।

भारी विरोध जताया।

केंद्र को अपनी भूल का एहसास तब और होने लगा जब एक एक कर कई राज्यों के मुख्यमंत्रियों ने अपने यहां यह घोषणा कर दी कि वे केबिनेट के इस फैसले को नहीं मानेंगे और अपने अपने राज्यों में कभी भी विदेशी कंपनियों को अपने स्टोर खोलने नहीं देंगे। एक तरह से राज्यों का केंद्र को यह अल्टीमेटम था कि वह संघीय ढांचे के खिलाफ जाकर काम न करे।

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री मायावती, बिहार के मुख्यमंत्री नीतिश कुमार, मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान और छत्तीस गढ़ के मुख्यमंत्री रमण सिंह ने ही नहीं बल्कि कांग्रेस शासित केरल से भी यह आवाज आई कि विदेशी कंपनियों को खुदरा व्यापार में घुसने नहीं देंगे। इतने मुखर के बाद कांग्रेस के हौसले पस्त होने ही थे। उस पर भी उनके होश तब और फाख्ता हो गए जब कांग्रेस के सांसद ही केबिनेट के फैसले के खिलाफ खुले आम विरोध के स्वर उठाने लगे।

स्वदेशी जागरण मंच आध्रप्रदेश प्रांत के कार्यकर्ता प्रदर्शन करते हुए

कांग्रेस को यह अहसास हो गया कि यदि वे खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश की अनुमति वाले फैसले पर अड़े तो उनकी सरकार जानी निश्चित है। तब सोनिया गांधी और मनमोहन सिंह ने प्रणब मुखर्जी को आगे कर विरोध की लहर को कम करने की जिम्मेदारी सौंपी।

प्रणब ने सबसे पहले ममता बनर्जी को जाकर यह आश्वासन दिया कि सरकार केबिनेट के फैसले पर रोक लगाने के लिए तैयार है। फिलहाल केबिनेट के फैसले पर अमल रोका गया है। फैसले को निरस्त नहीं किया गया है। कांग्रेस अभी भी यह सोंच रही है कि उसकी राजनीतिक मजबूरी दूर होते ही इस फैसले को लागू करेंगे।

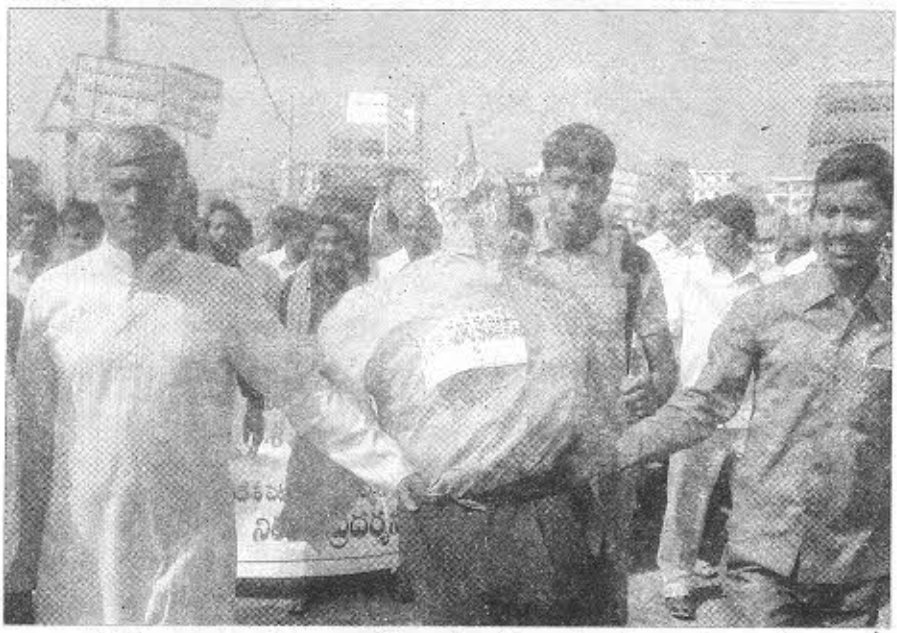

स्वदेशी जागरण मंच आध्रप्रदेश प्रांत के कार्यकर्ता प्रदर्शन करते हुए

तत्काल संकट टल गया है। कांग्रेस द्वारा रोल बैक ने थोड़ी राहत दी है। पर यह कहना मुश्किल है कि भारतीय बाजार पर गिद्ध दृष्टि जमाए अमरीका मनमोहन सिंह की सरकार को कब तक की मोहलत देती है। चूंकि यह सरकार पूरी तरह से ओबामा प्रशासन के दबाव में है इसलिए जरूरी है कि इस पर से जनदबाव न हाटे। प्रणब मुखर्जी के इस बयान से लगता है कि कांग्रेस केबिनेट के फैसले पर तत्काल रोक लगाने के लिए मजबूर सरकार की स्थिरता को ध्यान रखते हुए हुई है।

खुद प्रणब मुखर्जी अपने सांसदों को यह समझाने में लगे हैं कि यदि हम जिद पर अड़े रहते तो मध्यावधि चुनाव की आशंका उत्पन्न हो सकती थी। ❑

खुदरा व्यापार में विदेशी निवेश की मंजूरी

केबिनेट का फैसला संविधान का उल्लंघन : वंदना शिवा

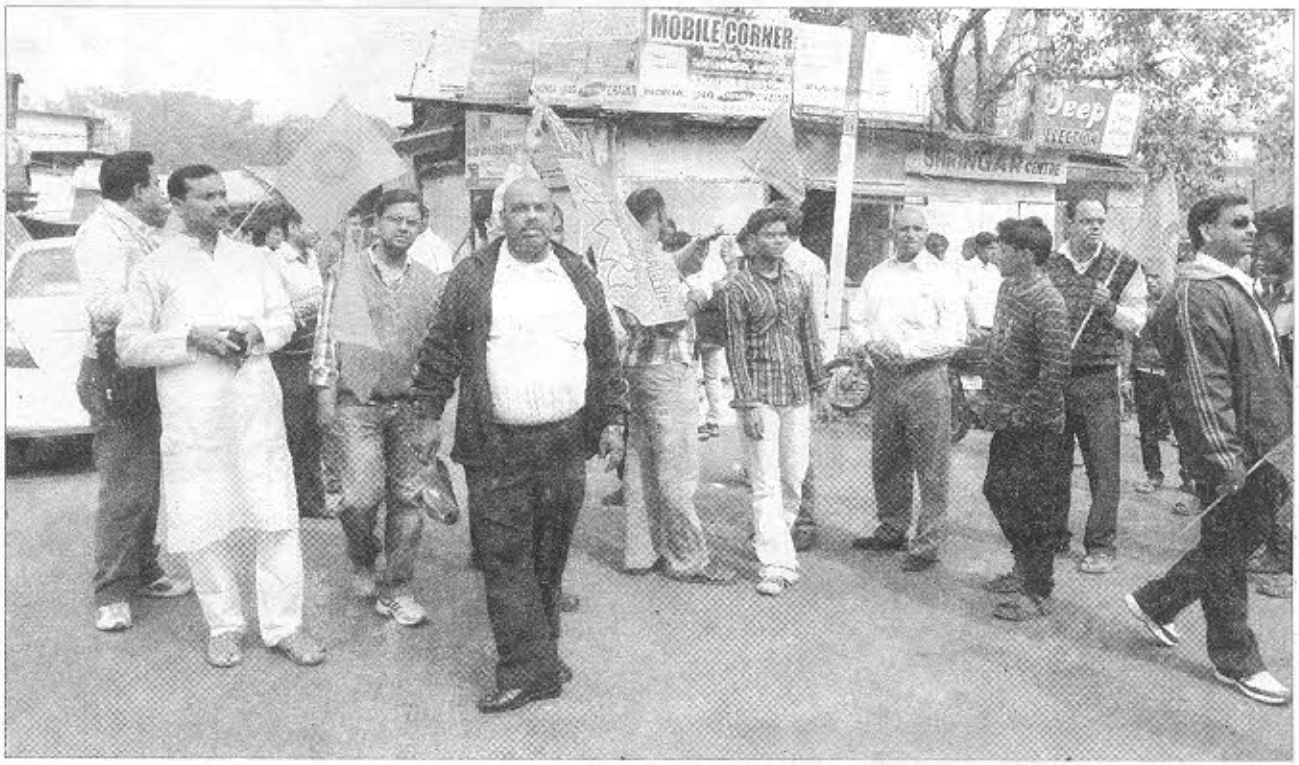

वालमार्ट और टेस्कों जैसी निजी कंपनियों का उद्देश्य भारत की जनता और किसानों की सेवा करना नहीं है, बल्कि उनकी कोशिश कम दाम पर दुनिया भर से चीजें लाकर ऊंचे दाम पर बेच कर लाभ कमाना है। यह तर्क भी गलत है कि वालमार्ट के आने से देश में ढ़ांचागत विकास होगा। यह प्रचार पूरी तरह भ्रामक है।

जब नागरिक महंगाई से पूरी तरह त्रस्त है, जब नव आर्थिक उदारवादी नीति ने अधिकतर भारतीयों के लिए आर्थिक संकट ला खड़ा किया हो, वैसे में 24 नवंबर को अचानक केबिनेट का यह फैसला कि मल्टी ब्रांड खुदरा व्यापार में 51 फीसदी विदेशी निवेश को मंजूरी दी जा रही है, देश को सन्न कर गया। दूसरे शब्दों में यह कहे कि सरकार ने वालमार्ट और टेस्को जैसी उन विदेशी कपंनियों के लिए भारत का खुदरा व्यापार खोल दिया, जो अभी तक जहां भी गई हैं, वहां की अर्थव्यस्था को तहस नहस कर दिया है। मनमोहन सिंह ने एक तरह से यह एलान सा कर दिया कि उन्हें न तो नागरिकों की चिंता है और न संसद की मर्यादा का फिक, उन्हें तो हर हाल में देश में कॉरपोरेट गवर्नेंस लाना है, भले ही यह सिस्टम अपने जन्मदाता देश अमरीका और यूरोप में ही फेल हो गया हो।

सरकार के समर्थकों की ओर से यह तर्क दिया जा रहा है कि केबिनेट के इस फैसले से किसानों और उपभोक्ताओं को फायदा होगा, इसके विपरीत दूसरे लोग इसे इस सिद्धांत के रूप में विरोध कर रहे हैं कि इससे छोटे किसानों और छोटे खुदरा व्यापारियों का अहित होगा, पर इससे अलग बड़ा कारण प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह का अपना वायदा निभाना है, जो उन्होंने वर्ष 2005 में कृषि के क्षेत्र में अमरीका–भारत जानकारी आदान प्रदान के एक समझौते पर हस्ताक्षर के दौरान किया था। तब उन्होंने मोनसैंटो जैसी बड़ी कंपनी को लगभग भारत के बीच उद्योग को सौंप दिया था। तब उन्होंने भारतीय खाद्यान्न क्षेत्र को कारगिल और कॉनग्रा जैसे बड़ी कंपनियों को खुदरा व्यापार को वालमार्ट जैसी कंपनी को सौंप देने का संभवतः वायदा किया था।

तब भारत और अमरीका के बीच हुए जानकारी आधारित समझौते के समय इन सारी कंपनियों के प्रतिनिधि मौजूद थे।

यह भी कहा जा रहा है कि खुदरा व्यापार के क्षेत्र में विदेशी कंपनियों के आने से ग्रामीण क्षेत्रों में ढांचागत विकास होगा। आर्थात् वहां अच्छी सड़के बन जाएंगी। बिजली की आपूर्ति बढ़ जाएगी। बड़े–बड़े कृषि बाजार बन जाएंगे। किसानों का माल सीधे खेत से मॉल में पहुंच जाएगा। बीच के दलाल हट जाएंगे। आदि आदि। हमें इसकी जरूरत नहीं है। हमारी विकेंद्रित अर्थव्यवस्था है। हमारे यहां पहले से ही मंडी समिति, हॉट और बाजार मौजूद है, जो कम लागत पर अधिक से अधिक रोजगार पैदा करते हैं। वहां लाखों लोग रोजाना अपनी जीविका कमाते हैं। फिर खुदरा व्यापार से चार करोड़ लोग सीधे जुड़े हुए हैं। हम इसे खुदरा व्यापार का लोकतंत्र कह सकते हैं। इस पर वालमार्ट और टेस्को जैसी कंपनियों का हमला सिर्फ असंगठित खुदरा व्यापार और निगमीकृत खुदरा व्यापार के बीच द्वंद्व के रूप में नहीं देख सकते, बल्कि स्वनियंत्रित खुदरा व्यापार लोकतंत्र को समाप्त करने की कोशिश के रूप में इसे देखना होगा।

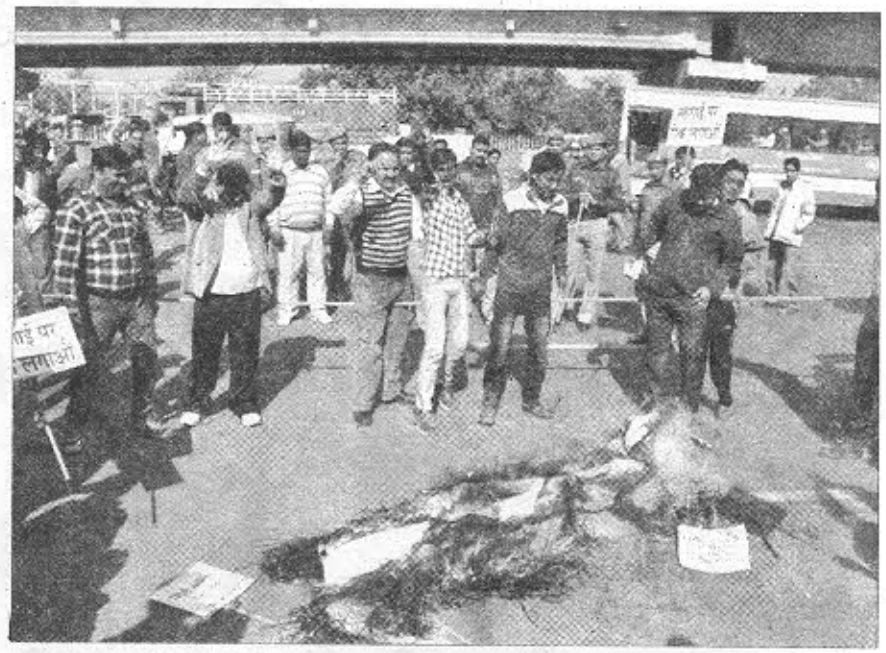

स्वदेशी जागरण मंच दिल्ली प्रांत के कार्यकर्ता विदेशी कंपनियों का पुतला फूंकते हुए

वालमार्ट और टेस्कों जैसी निजी कंपनियों का उद्देश्य भारत की जनता और किसानों की सेवा करना नहीं है, बल्कि उनकी कोशिश कम दाम पर दुनिया भर से चीजें लाकर ऊंचे दाम पर बेच कर लाभ कमाना है। यह तर्क भी गलत है कि वालमार्ट के आने से देश में ढ़ांचागत विकास होगा। यह प्रचार पूरी तरह भ्रामक है। वालमार्ट को एकल ब्रांड और थोक व्यापार में प्रवेश 2007 में ही मिल गया था, तब कंपनी ने एयरटेल के साथ मिलकर इजी डे और बेस्ट प्राइस बॉक्स जैसे स्टोर खोलने शुरू किए थे। लेकिन आज तक वालमार्ट ने ग्रामीण ढ़ांचागत विकास पर कुछ खर्च नहीं किया, बल्कि उन्होंने हमारी ही कंपिनयों की सुविधाओं का इस्तेमाल किया। उनकों खुली छूट देने की वकालत करने वालों को खुद इसका आकलन करना चाहिए।

केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा खुदरा क्षेत्र में 51 फीसदी विदेशी निवेश की अनुमति देने का फैसला हमारे संघीय ढांचा के भी खिलाफ है। खुदरा व्यापार राज्य सरकार की विषय वस्तु है, केंद्र सरकार ने एक तरह से राज्य सरकारों के अधिकार का हनन किया है। यह संविधान का सीधा उल्लंघन है। चूंकि यह विषय देश की आधी आबादी के जीवन यापन से जुड़ा है, इसलिए केंद्र सरकार को इसे लागू करने से पहले देश को विश्वास में लेना पड़ेगा। क्योंकि यह बहुत ही घातक कदम है। ❑

खुदरा व्यापार के क्षेत्र में विदेशी कंपनियों के आने से ग्रामीण क्षेत्रों में ढांचागत विकास होगा। आर्थात् वहां अच्छी सड़के बन जाएंगी। बिजली की आपूर्ति बढ़ जाएगी। बड़े–बड़े कृषि बाजार बन जाएंगे। किसानों का माल सीधे खेत से मॉल में पहुंच जाएगा। बीच के दलाल हट जाएंगे। आदि आदि। हमें इसकी जरूरत नहीं है। हमारी विकेंद्रित अर्थव्यवस्था है। हमारे यहां पहले से ही मंडी समिति, हॉट और बाजार मौजूद है, जो कम लागत पर अधिक से अधिक रोजगार पैदा करते हैं। वहां लाखों लोग रोजाना अपनी जीविका कमाते हैं।

स्वदेशी जागरण मंच का दशम् राष्ट्रीय सम्मेलन, देवघर (झारखंड) में 11, 12, 13 नवंबर 2011 को संपन्न हुआ। इस सम्मेलन में चार प्रस्ताव पारित किए गए, जिन्हें हम पाठकगण के लिए यहां प्रस्तुत कर रहे हैं :– सं.

पारित प्रस्ताव - 1

विदेशी निवेश के रूप में आर्थिक आक्रमण

स्वदेशी जागरण मंच मांग करता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को खुदरा क्षेत्र में पूर्णतः प्रतिबंधित किया जाए। टोबिन टैक्स लगाकर विदेशी संस्थागत निवेश को नियंत्रित किया जाए। कालेधन का नया स्वरूप हॉटमनी के रूप में परिवर्तित होकर देश में आने पर कम से कम 3 वर्ष तक वापस निकालने को प्रतिबंधित कर विदेशी संस्थागत निवेश का नियमन और नियंत्रण किया जाए।

1991 से आर्थिक सुधारों के नाम पर प्रत्यक्ष विदेशी निवेश एवं प्रत्यक्ष संस्थागत निवेश की ओट में विदेशी निवेश ने पिछले 20 वर्षों में हमारे आर्थिक क्षेत्र में भारी तबाही मचाई है।

ब्राउन फील्ड निवेश के परिप्रेक्ष्य में देश की वर्तमान सफल कंपनियों के हस्तांतरण के लिये प्रत्यक्ष विदेशी निवेश एक औजार बन गया है। व्यावहारिक तौर पर रोजगार सृजन या हरित क्षेत्र निवेश (Green Fields Investment) या अधोसंरचना विकास में FDI की भूमिका नगण्य है। वहीं दूसरी ओर डॉ. मुरली मनोहर जोशी की अध्यक्षता में संसदीय समिति की रिपोर्ट की अनदेखी करते हुए भारत सरकार द्वारा खुदरा क्षेत्र को भी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिये खोल दिया जाना खुदरा व्यापार से सीधे जुड़े देश के चार करोड़ लोगों की जीविका के लिये संकटकारी हो गया है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का अबाधित प्रवेश एक आर्थिक संकट का द्योतक ही नहीं वरन देश की सुरक्षा के लिये भी गंभीर खतरे का कारण बन रहा है।

विदेशी संस्थागत निवेश के आने का अर्थ है देश के संपूर्ण वित्तीय क्षेत्र की अस्थिरता वास्तविक निवेशकों की पहचान छुपाकर मॉरिशस मार्ग से इस अनापशनाप पैसे का आना कालेधन, टैक्स हेवन और नशीले पदार्थों के गोरखधंधे को एक प्रकार से महिमामंडित करना है जिससे राष्ट्रीय सुरक्षा पर संकट के बादल मंडराने लगे हैं। यह सब तब हो रहा है जब राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार समिति ने प्रतिभूति विनियमन बोर्ड भारत सरकार को पार्टिसिपेटरी नोट्स में निवेशकों के नाम उल्लेख की सलाह पूर्व में ही दे दी थी, ताकि विदेशी संस्थागत निवेश पर नियंत्रण स्थापित किया जा सके ।

यह कहना कि FDI/FII से व्यापार घाटा/चालू खातागत घाटा की पूर्ति हो सकेगी एक कपोल कल्पना है। 150 बिलियन डॉलर का व्यापार खातागत घाटा एवं जी.डी.पी. का 3 प्रतिशत से अधिक चालू खातागत घाटा 1990 की स्थिति से अधिक भयावह है जब हमें देश का सोना गिरवी रखना पड़ा था। इस BOP (भुगतान शेष) संकट ने देश की आर्थिक संप्रभुता को दांव पर लगा दिया है। व्यापार खाते पर लगातार दबाव और शेयर बाजार से कभी भी अचानक विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा पैसा वापस निकालना भारतीय मुद्रा को कमजोर कर रहा है।

NDA शासन के समय 35 रूपए प्रति डॉलर से आज हम 50 रूपए प्रति डॉलर पर पहुंच गए हैं (1991 में 16 रूपए प्रति डॉलर से) यह अवमूल्यन 300 प्रतिशत से अधिक है जिसका प्रभाव मुद्रास्फीति एवं कीमतों के बढ़ने के रूप में देशवासी पिछले दो दशकों से भोग रहे हैं।

देश में घरेलू बचत जो विकास के लिये 90 प्रतिशत से अधिक का निवेश है इसे प्रोत्साहित दिये जाने की आवश्यकता है। भारत सरकार की वर्तमान आर्थिक नीतियां जिसमें ब्याज दर पिछले 18 माह में रिजर्व बैंक के द्वारा 13 बार बढ़ा दिया जाना आदि अर्थप्रबंध और निवेश प्रबंध को और बड़ी खाई में ढकेलने जैसा है। वस्तुओं का निर्यात, विदेशी निवेश का आयात चीन द्वारा अबाधित निर्यात से बना आयात निर्यात का असंतुलन आर्थिक विकास की नींव को खोखला कर रहा है।

स्वदेशी जागरण मंच मांग करता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को खुदरा क्षेत्र में पूर्णतः प्रतिबंधित किया जाए। टोबिन टैक्स लगाकर विदेशी संस्थागत निवेश को नियंत्रित किया जाए। कालेधन का नया स्वरूप हॉटमनी के रूप में परिवर्तित होकर देश में आने पर कम से कम 3 वर्ष तक वापस निकालने को प्रतिबंधित कर विदेशी संस्थागत निवेश का नियमन और नियंत्रण किया जाए। ❑

पारित प्रस्ताव - 2

भारतीय कृषि ा एवं किसानों की हत्या का सिलसिला बंद करो

सन् 1994 में कृषि संबंधी विश्व व्यापार संगठन के समझौते के समय से किसान आत्महत्या की बाढ़ सी आई हुई है। राष्ट्रीय अपराध दस्तावेज ब्यूरो के प्रतिवेदन के अनुसार सन् 1995 से 2010 तक की अवधि में देश भर में 2,56,913 किसान आत्महत्या कर चुके हैं। इनमें 56 प्रतिशत संख्या महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश की है। भारत के कृषि क्षेत्र के इस गंभीर संकट के प्रति भारत सरकार घोर संवेदनहीन है।

असंदिग्ध रूप में यह कहा जा सकता है कि विगत दो दशकीय वैश्वीकरण के दौर की कोई एक उपलब्धि है तो वह है खेती और किसानों की हत्या और ऐसा

प्रतीत होता है कि वैश्वीकरण का दौर आरंभ होने के बाद के दो दशकों की भारतीय सरकारों की कार्यसूची में यही एकमात्र कार्य रहा है।

भारत के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान सन् 1951 में 51 प्रतिशत था। तब से लगातार गिरता हुआ यह योगदान केवल आज 14.2 प्रतिशत रह गया है। इसके विपरीत कृषि पर निर्भर हमारी जनसंख्या का प्रतिशत लगातार 60 प्रतिशत (लगभग 70 करोड़) बना हुआ है।

सन् 1994 में कृषि संबंधी विश्व व्यापार संगठन के समझौते के समय से किसान आत्महत्या की बाढ़ सी आई हुई है। राष्ट्रीय अपराध दस्तावेज ब्यूरो के प्रतिवेदन के अनुसार सन् 1995 से 2010 तक की अवधि में देश भर में 2,56,913 किसान आत्महत्या कर चुके हैं। इनमें 56 प्रतिशत संख्या महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, कर्नाटक और आंध्र प्रदेश की है। भारत के कृषि क्षेत्र के इस गंभीर संकट के प्रति भारत सरकार घोर संवेदनहीन है। किसान जिस अभूतपूर्व संकट में फंसे हैं, उस संकट से उबरने में उनकी सहायता तो दूर, प्रत्यक्षतः सरकार उनके संकट को गहरा करने में सक्रियता से लगी हुई है।

संसद के शीतकालीन सत्र में कृषि से संबद्ध जो विधेयक पारित किये जाने की संभावना है, उनपर दृष्टिपात करें।

1. भूमि अधिग्रहण एवं पुनर्वसन एवं पुनर्बदोबस्त विधेयक 2011

अपेक्षित है कि यह विधेयक 116 वर्ष पुराने भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894 का स्थान लेगा।

इस विधेयक का तर्क है कि ढांचागत, उद्योग एवं शहरीकरण जैसे कार्यों के लिये कृषि भूमि को गैर कृषि भूमि में परिवर्तित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। क्या यह दैवदुर्विलास नहीं है कि ग्रामीण विकास मंत्रालय शहरी विकास के लिये कार्य कर रहा है?

विधेयक में निजी क्षेत्र को भूमि अधिग्रहण की अनुमति है बशर्ते वह सार्वजनिक हित के लिये हो किन्तु 'सार्वजनिक हित' को विधेयक में निजी निगमीय क्षेत्र की सुविधा के लिये हेतुपुरस्सर बहुत ही अस्पष्ट रूप में परिभाषित किया गया है और पुनर्बदोबस्त का जो पिटारा किसानों और आजीविका गंवाने वालों के सामने पेश किया गया है, उसमें (अ) 12 महीनों के लिये प्रतिमाह प्रति परिवार मासिक रूपए 3,000/- आजीविका भत्ते का प्रावधान प्रस्तावित है। यह प्रावधान प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 20 रूपए बनता है जो कि योजना आयोग

द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष शपथपूर्वक प्रस्तुत की गई परिभाषा के स्तर से भी बहुत कम है। इस शपथपत्र में ग्रामीण गरीबी स्तर को 26 रूपए प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति परिभाषित किया गया है। (ब) विधेयक में किसानों और आजीविका गंवानेवालों को प्रति परिवार प्रतिवर्ष 2,000 रूपए 20 वर्षों तक देने का प्रस्ताव है। यह प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन 13.30 रूपए बनता है। यह भी गरीबी रेखा संबंधी 26 रूपए प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन की परिभाषा से बहुत कम है। जहां तक पुनर्वसन और पुनर्बदोबस्त का प्रश्न है, यह है वास्तविकता!

विधेयक में कृषि भूमि को गैरकृषि भूमि के रूप में बदलने की कोई अधिकतम सीमा प्रस्तावित नहीं है। तात्पर्य यही कि भूमि अधिग्रहण तथा पुनर्वसन एवं पुनर्बदोबस्त विधेयक में देश की खाद्य, चारा, पोषक आहार एवं जल की सुरक्षा की कोई चिंता दिखाई नहीं देती है।

2. बीज विधेयक – 2010

बीज विधेयक 2010 भारतीय और बहुराष्ट्रीय बीज निर्माताओं के लिए बांध के सभी दरवाजे खोल दिये जाने पर आमादा है। यहां तक कि इन उत्पादकों के बीजों की कीमतों पर किसी अंकुश की आवश्यकता उसे महसूस नहीं होती। इसके परिणाम स्वरूप किसानों का अनियंत्रित शोषण होगा।

विधेयक में नकली और घटिया स्तर के बीज के विपणन के विरूद्ध 30 हजार रूपये का अर्थदंड प्रस्तावित है, वह अत्यंत नगण्य है। विधेयक बीज उत्पादक निगम कंपनियों के प्रति अत्यंत नरम और किसान के प्रति अत्यंत कठोर है।

3. जैव तकनीकी नियमन अधिकरण विधेयक

इस विधेयक का उद्देश्य जैविक रूप में परिवर्तित बीजों के उद्योगों का नियमन है जो कि भारतीय बीज उद्योग के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर प्रवेश के प्रयास में है परंतु विधेयक भारतीय और बहुराष्ट्रीय बीज कंपनियों का नियंत्रण और नियमन करने के स्थान पर प्रत्यक्ष में उन लोगों पर लगाम लगाना चाहता है जो जैव परिवर्तित बीजों और जैव तकनीकी के आलोचक हैं विधेयक में खास तौर पर यह प्रतिबंधित है कि बिना किसी समुचित वैज्ञानिक प्रमाण के यदि कोई जैव तकनीकी और जैव परिवर्तित बीजों की आलोचना करता है तो वह दो वर्षों के कारावास या/और 2 लाख रूपए के जुर्माने का भागी होगा। इतना ही नहीं, जैव तकनीकी के विरूद्ध कोई अनुसंधान भी दंडनीय होगा।

यह एक ऐसा राक्षसी कानून होगा जो नागरिकों की वाणी की स्वतंत्रता और वैज्ञानिक जिज्ञासा पर अंकुश लगायेगा। यह विधेयक अनुचित रूप से जैव तकनीक बीज उद्योग का पक्षपाती है और अंततः यह भारत के परंपरागत बीजों का विनाश करेगा।

तात्पर्य यही कि संसद के समक्ष लंबित उपरोक्त तीनों विधेयक यदि उनके वर्तमान स्वरूप में पारित किये जाते हैं तो इनसे भारतीय खेती और किसानों की हालत गिरेगी और अंततः उनका विनाश होगा।

अतः स्वदेशी जागरण मंच का यह दसवां राष्ट्रीय सम्मेलन सरकार से आग्रह करता है कि :–

1. उपरोक्त विधेयकों को जल्दबाजी में पारित न किया जाए।
2. इन विधेयकों पर ग्राम पंचायतों, किसान संगठनों और आम जनता के स्तर पर व्यापक बहस होने दी जाए।
3. किसान विरोधी नीति तत्काल समाप्त की जाए।
4. आगामी 12 महीनों के भीतर किसानपोषक नीतियां विकसित की जाएं और आगामी 12वीं पंचवर्षीय योजना–अवधि में उन्हें क्रियान्वित किया जाए।
5. कृषि और किसानों की हत्या बन्द की जाए। ❑

पारित प्रस्ताव - 3

भ्रष्टाचार और काला धन - व्यवस्था परिवर्तन की चुनौती

वर्तमान सरकार आकंठ, भ्रष्टाचार में लिप्त है, यह इस बात से स्पष्ट होता है कि जो लोग भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाते हैं उन्हें तरह–तरह से बदनाम तो किया ही जाता है, साथ ही साथ उनके आंदोलन को पुलिस बल के द्वारा कुचलने से भी सरकार हिचकती नहीं है।

ग्लोबल फाईनेंशियल इंटेग्रिटी द्वारा अवलोकन के अनुसार भारतीय नागरिकों द्वारा 1948 से लेकर 2008 तक 462 अरब

अमरीकी डॉलर विदेशी बैंकों में जमा किये है। ग्लोबल फाईनेंशल इंट्रेग्रिटी ने इस अनुमान को लगाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष के आंकड़ों को विश्व बैंक, अवशिष्ट मॉडल व छद्म व्यापार आंकड़ों मॉडल का उपयोग किया है।

उदारीकरण के पश्चात 2002–2006 की अवधि के दौरान भारत से अवैध वित्तिय बहिर्वाह (illicit financial outflow) 22.7 अरब अमरीकी डॉलर से बढ़कर 27.3 अरब डॉलर प्रति वर्ष हो गया। एक अनुमान के अनुसार आज भारत के 2,100,000 करोड़ रूपये विदेशी बैंकों में जमा है तथा लगभग 19 अरब बिलियन अमरीकी डॉलर या 1 करोड़ रूपये प्रतिवर्ष काले धन के रूप में बाहर जा रहे है। अनेक संस्थान विश्व भर के सभी गरीब तथा विकासशील देशों से बहुराष्ट्रीय कपंनियों द्वारा लूटे जाने वाले धन की मात्रा का अनुमान लगा रहे है और मानते है कि यह काला धन एक खरब अमरीकी डॉलर के लगभग है। ऐसे की एक अनुमान के अनुसार भारत के 1.4 खरब रूपये विदेशों में काले धन के रूप में पड़े हैं।

अब यह स्पष्ट हो चुका है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों, व्यापारियों, नशेली दवा बेचने वालों, घूसखोर अधिकारियों तथा भ्रष्ट राजनेताओं ने इस धन को स्वीजरलैंड तथा अन्य टैक्स हैवन कहने वाले स्थान जैसे चैनल द्वीप, मोरेशस, कैमेन द्वीप, बहामा तथा लिकटेस्टीन में छिपा कर रखा है।

सरकार के हर स्तर पर व्याप्त भ्रष्टाचार आम आदमी की जिन्दगी कष्टमय बना रहा है क्योंकि जनता का धन भ्रष्ट राजनेताओं द्वारा चुराया जा रहा है जिसके कारण शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल और स्वच्छता जैसी बुनियादी सामाजिक सेवाएं भी उपलब्ध कराने में कठिनाई हो रही हैं और इस कारण से गरीबों के जीवन स्तर में सुधार असंभव होता जा रहा है।

आज भ्रष्ट राजनेताओं और नशीली दवाओं के व्यापारियों, तस्करों और यहां तक कि आतंकवादियों के बीच सांठ–गांठ चल रही है क्योंकि ये तथ्य अनैतिक रूप से धन के स्थानांतरण में एक दूसरे का सहयोग करते हैं। वर्तमान सरकार आकंठ, भ्रष्टाचार में लिप्त है, यह इस बात से स्पष्ट होता है कि जो लोग भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाते हैं उन्हें तरह–तरह से बदनाम तो किया ही जाता है, साथ ही साथ उनके आंदोलन को पुलिस बल के द्वारा कुचलने से भी सरकार हिचकती नहीं है।

फ्रांस में आयोजित जी–20 के सम्मेलन में 40,000 से अधिक लोगों ने इस टैक्स हैवन की राजदारी को समाप्त करने की मांग की। अब तक जी–20 में से 10 देशों ने 14 अरब रूपये की अतिरिक्त राजस्व स्वैच्छिक घोषणा के माध्यम से प्राप्त की। इसका ब्यौरा इस प्रकार है – इटली – रूपए 600 करोड़, अमरीका – रूपए 2000 करोड़, जर्मनी – रूपए 1800 करोड़, फ्रांस – रूपए 1200 करोड़, दक्षिण कोरिया – रूपए 510 करोड़, नैदरलैंड – रूपए 495 करोड़, ब्राजील – रूपए 315 करोड़, स्पैन – रूपए 260 करोड़, इगीलिस्तान – रूपए 260 करोड़, चीन – रुपए 80 करोड़।

भारत सरकार काले धन को वापस लाने के बारे में कोई ठोस कदम नहीं उठा रही है। यह जानबूझकर टालमटोल का रवैया अपना रही है। क्योंकि कांग्रेस पार्टी को चन्दा देने वाले अधिकतर लोग इस काले धन को जमा करने वाले है। जर्मनी तथा फ्रांस द्वारा दिए गए काला धन रखने वालों के 700 लोगों के नामों को गुप्त रखा जा रहा है।

यह स्पष्ट रूप से दिख रहा है कि सत्तारूढ़ पार्टी की मंशा काले धन के मालिकों की रक्षा करना है। अब समय आ गया है कि सरकार को बाध्य किया जाए कि वो विदेशों में जमा काले धन को वापिस लाने के लिए ठोस कदम उठाए।

स्वदेशी जागरण मंच की यह स्पष्ट मान्यता है कि भ्रष्टाचार और कालाधन आज की राजनीतिक व्यवस्था की उपज है और आज की राजनीतिक व्यवस्था लूट की व्यवस्था के नाते स्थापित हो गई है। यह व्यवस्था हमारी अर्थव्यवस्था, उत्पादन संबंधों और यहां तक कि सुरक्षा के लिए भी खतरे उत्पन्न कर रही है। जरूरत इस बात की है वर्तमान राजनीतिक और अफसरशाही व्यवस्था में मूलभूत परिवर्तन करते हुए मजदूरों, किसानों और दलितों के शोषण पर रोक लगाई जाए और वास्तव में जन के तंत्र की स्थापना हो सके। भारत सरकार के इस कुकृत्य तथा दुष्कर्म को देखते हुए यह प्रस्ताव पारित किया जा रहा है, स्वदेशी जागरण मंच अपने विरोध प्रदर्शन तथा आंदोलन को ओर तेज करेगा और यह तब तक जारी रहेगा जब तक कि काला धन वापिस नहीं लाया जायेगा।

स्वदेशी जागरण मंच मांग कर रहा है कि विदेशों में जमा काले धन को राष्ट्रीय संपत्ति घोषित किया जाए और काला धन जमा करने वालो की भारत में जो संपत्ति है, उसकी कुर्की की जाए और अन्य आक्रामक पग उठाकर काले धन को शीघ्रतिशीघ्रं वापस लाया जाए। इस कार्य को बल देने के लिए स्वदेशी जागरण मंच सभी देशभक्त ताकतों को साथ लेते हुए एक देशव्यापी आंदोलन करेगा। ❑

पारित प्रस्ताव - 4

वॉलस्ट्रीट कब्जाओ आंदोलन

भारत में बहुराश्ट्रीय कंपनियों के प्रादुर्भाव के चलते किसान आत्महत्याएं कर रहे हैं, बढ़ती महंगाई, बंद होते उद्योग और समाप्त होता स्वरोजगार आज देश के लोगों का जीवन दूभर कर रहा है। कंपनियों की किसी भी कीमत पर लाभ कमाने की महत्वाकांक्षा दुनियाभर के लोगों के लिए कष्टों का कारण बन रही है।

पिछले दो दशकों से भी अधिक समय से स्वदेशी जागरण मंच और दुनियाभर के विकासशील देशों में वैश्वीकरण और बहुराष्ट्रीय कंपनियों की शोषणकारी व्यवस्था के खिलाफ चल रहे संघर्ष ने अब विकसित देशों में भी फैलाव लेना शुरू किया है। गत डेढ़ माह से अमेरिका के आर्थिक सत्ता केन्द्र न्यूयार्क शहर में वॉलस्ट्रीट के 'झुकोटी पार्क' में 'ऑक्युपाय वॉलस्ट्रीट' आंदोलन शुरू है। इसमें बेरोजगारी से त्रस्त हुए युवक शामिल है। कुछ को वैश्वीकरण के कारण उद्ध्वस्त हुई अर्थव्यवस्था पटरी पर लानी है, तो कुछ युवकों को अमेरिका के कर्जदार होने के कारणों का उत्तर चाहिए। वहाँ बैठे सब युवक आज की अर्थव्यवस्था से चिढ़े हुए हैं। वॉलस्ट्रीट पर रहनेवाले अतिअमीर लोगों के हितसंबंधों का संरक्षण करनेवाली अर्थव्यवस्था हमें मान्य नहीं, ऐसा उनका कहना है। वैश्वीकरण आज दुनिया के एक प्रतिशत लोगों के लिए ही लाभकारी सिद्ध हो रहा है। प्रो0 क्रुगमैन का कहना है कि इनमें से भी मात्र 0.1 प्रतिशत लोग ही अति धनाढ्य की श्रेणी में आते हैं। अमेरिका के 99 प्रतिशत लोगों की आवाज बुलंद करनेवाले ये युवक 'झुकोटी पार्क' में इकट्ठा हुए हैं।

आज की नव–साम्राज्यवादी अर्थव्यवस्था का होनेवाला विरोध केवल अमेरिका तक मर्यादित नहीं है, अब यह आंदोलन स्पेन, कॅनाडा, यूरोपीय देश ऐसे दुनिया के कुल 83 देशों में शुरू हुआ है। यह इस बात का प्रतीक है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों के शोषण पर आधारित वैश्वीकरण की यह व्यवस्था दुनिया के आम लोगों के जीवन को दूभर बना रही है।

यह अनियंत्रित, बेछूट, मुक्त बाजार व्यवस्था – सट्टेबाजी तथा लोभीवृति पर आधारित है। केवल मुट्ठीभर लोगों के लाभ के लिए विषमता बढ़ानेवाली यह अर्थव्यवस्था हमें नही चाहिए, यह इस आंदोलन के पीछे की भावना है। स्वदेशी जागरण मंच की हमेशा से यह दृढ़ मान्यता है कि वैश्वीकरण, उदारीकरण, निजीकरण, इन माध्यमों से आनेवाली आर्थिक नीतियाँ सामान्य मनुष्य के हित की नहीं है। ऐसी आर्थिक नीतियाँ विभिन्न देशों के बीच, और देशांतर्गत विषमता बढ़ानेवाली सिद्ध होगी, ऐसा मंच का दृढ़मत है। पिछले 20 वर्षों के वैश्वीकरण ने भारत में भी कुछ मुट्ठी भर लोगों ही लाभ पहुंचाया है। देश की 80 प्रतिशत जनसंख्या को वैश्वीकरण का कोई लाभ नहीं मिला है।

भारत में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रादुर्भाव के चलते किसान आत्महत्याएं कर रहे हैं, बढ़ती महंगाई, बंद होते उद्योग और समाप्त होता स्वरोजगार आज देश के लोगों का जीवन दूभर कर रहा है। कंपनियों की किसी भी कीमत पर लाभ कमाने की महत्वाकांक्षा दुनियाभर के लोगों के लिए कष्टों का कारण बन रही है।

वैश्विक स्तर पर चल रहे यह सब आंदोलन स्वदेशी जागरण मंच द्वारा गत 20 वर्षों से अभिव्यक्त किए जा रहे मतों का समर्थन करनेवाले है। स्वदेशी जागरण मंच की यह स्पष्ट मान्यता है कि वैश्वीकरण और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खिलाफ चल रहे संघर्षों दुनिया के किसान मजदूर और आम आदमी को एकजुट होकर संघर्ष करना चाहिए। इस कारण स्वदेशी जागरण मंच विभिन्न देशों में हो रहे इन आंदोलनों के पीछे की भावना और विचारों का, इस प्रस्ताव द्वारा समर्थन करता है।

स्वदेशी जागरण मंच की यह सभा इस प्रस्ताव के माध्यम से भारत सरकार से मांग करती है कि, जागतिक स्तर पर होने वाले इन आंदोलनों के परिप्रेक्ष्य में भारत के हित की आर्थिक नीतियाँ बनाने के लिए योग्य कदम उठाएँ ।

इस प्रस्ताव द्वारा देशभक्त जनता को आवाहन किया जाता है कि वैश्विक स्तर पर चल रहे इस प्रकार के आंदोलन स्वदेशी जागरण मंच के मतों और विचारों की पुष्टि करनेवाले होने के कारण इन आंदोलनों के पीछे की भावनात्मक एवं वैचारिक पृष्ठभूमि शहर–शहर और गाँव–गाँव में जनमानस तक पहुंचाए। ❑

स्मरण

व्यर्थ न हो बलिदान (हुतात्मा बाबू गेनू)

(मूल मराठी लेख का मुकुंद गोरे द्वारा हिन्दी रूपांतरण – व्यर्थ न हो बलिदान पुस्तक से कुछ अंश)

12 दिसंबर 1930 को शुक्रवार का दिन था. . . अंग्रेज सार्जेंट ने लॉरी ड्राइवर से कहा 'लारी चलाओ, ये हरामखोर अगर मर भी गए तो कोई बात नहीं।' ड्राइवर भारतीय था – बलवीर सिंह नाम था। उसने लॉरी रोका दी। अंग्रेज सार्जेंट को गुस्सा आया उसने बलवीर सिंह को लॉरी की ड्राइवर सीट से हटाया और स्वयं लॉरी चलानी शुरू कर दी। गाड़ी बाबू गेनू की खोपड़ी के ऊपर से गुजर गई। वह गंभीर रूप से जख्म हो गए। सड़क पर चारों तरफ खून ही खून बिखर गया।

एक परिचय

पुणे जिले के आंबेगांव तहसील में पहाड़ियों के पार्श्व में बसा एक गां है – महाळुंगे पडवळ। यहीं बाबू गेनू का जन्म हुआ। पुणे जिले का नक्शा यदि सामने रखें तो यह गांव एक छोटे से बिंदु के रूप में दिखाई देगा। यह गांव पुणे–नासिक मुख्य मार्ग पर कळंब गांव से छह किलोमीटर पश्चिम में अवस्थित है। पुणे से 70 किलोमीटर दूर इस गांव के पश्चिम की ओर पहाड़ी के ऊपर एक शिव मंदिर है। यह इस गांव का श्रद्धा स्थान है। महाभारत काल में जब पांडव वनवास काट रहे थे, तब इस मंदिर में वे नमस्कार करते हुए आगे बढ़े थे। जिस रास्ते से वे गए थे, उस रास्ते को दिखाते हुए आज भी वहां के श्रद्धावान ग्रामवासी गर्व से कहते हैं – 'देखो इस रास्ते से पांडव गुजरे थे।'

यद्यपि यह गांव निसर्गमय था, तो भी ज्ञानबा सईद की सईदवाड़ी गांव से दो फर्लांग की दूरी पर ही बंजर जमीन भी थी, जहां केवल दो–चार सईद लोगों की झुग्गी–झोपड़ियां ही थीं। उपजाऊ जमीन न होने के कारण ज्ञानबा और उसकी पत्नी कोंडाबाई अपना खून–घसीना बहाकर खेती किया करते थे।

ज्ञानबा सईद और कोंडाबाई के तीन लड़के और एक लड़की थे। लड़कों के नाम थे – भीमा, कुशा, 'बाबू' और लड़की का नाम नामी था।

एक दिन इनके दो बैलों में से एक बैल मर गया। फिर इनके पिता ज्ञानबा का एक हाथ खेती करते हुए टूट गया। इनकी माता कोंडाबाई के पास दवा–दारू के लिए पैसे ही नहीं थे। अतः इलाज के

अभाव में इनके पिता ज्ञानबा के प्राण पखेरू उड़ गए। चार बच्चों के साथ कोंडाबाई रोती–पीटती रह गई। यह 1910 की घटना थी। तब बाबू दो वर्ष का था एवं इनकी छोटी बहन नामी पांच महीने की थी।

समय के साथ बाबू भी बड़ा होने लगा। वह बड़ा होशियार था। एक बार कुछ पढ़ते ही उसे सारी बातें समझ में आ जाती थीं। लेकिन इनको विद्यालय भेजना इनकी माता के लिए संभव नहीं था। इसलिए बाबू अपने घर का एक बैल, एक गाय एवं दो बकरियां चराने का काम करने लगा। गांव के बाहर कभी पहाड़ियों के पास तो कभी नहर के पास। बैल कभी–कभी दूसरे लोग किराए पर ले जाते थे जिसके बदले कोंडाबाई को कुछ पैसे मिल जाया करते थे।

एक दिन इनका दूसरा बैल किसी दूसरे बैल से भिड गया और लड़ते–लड़ते वह पहाड़ के नीचे गिर गया और मर गया। यह खबकर सुनकर इनकी माता जी (कोंडाबाई) स्तब्ध रह गई। यह उसके परिवार का दुर्भाग्य नहीं तो और क्या था? इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना के बाद उस परिवार में दो पैसे आने का साधन भी नष्ट हो गया। बैल के बिना खेती तो हो नहीं सकती थी। मजबूरन कोंडाबाई ने तीनों लड़कों को पड़ोसियों के घर काम पर लगा दिया और स्वयं अपनी लड़की नामी को साथ लेकर मुंबई के घोड़पदेव पहुंची। वहां धाकू प्रभू की वाड़ी में उसका एक भाई रहता था। जहां रहकर उसने काम करना प्रारंभ किया।

दूसरों के पास खेत पर काम करना बाबू के लिए बड़ा कठिन काम था। उसका मन उसमें नहीं लग पाता था। माँ के नहीं रहने पर उसमें थोड़ी स्वच्छंदता भी आ गई थी। वह अपनी मित्र मंडली के प्रह्लाद राऊत, बाबूलाल एवं शंकर परीट आदि दोस्तों के साथ गपशप लगाता और घूमता–फिरता रहता था। इन्हीं मित्रों के कारण बाबू को पुस्तकें पढ़ने की आदत लग गई थी।

एक दिन बाबू अपनी मां के पास मुंबई पहुंच गया। उसके वहां पहुंचने से कोंडाबाई की मुश्किलें बढ़ गई। तीन लोगों के साथ भाई के पास रहना संभव था नहीं। इसलिए उसने अपने एक रिश्तेदार कोंडाजी नारायण सईद की मदद से गिरन गांव के परेल बाराचाली में किराए का एक कमरा ले लिया। यह बस्ती हिंदू–मुस्लिम दोनों की एकत्र बस्ती थी।

अंग्रेज तो हिंदू–मुस्लिम को एकत्र देखना नहीं चाहते थे। उनकी तो 'फूट डालो शासन करो' की नीति होती थी। अतः इस बस्ती में रहना किसी ज्वालामुखी के दहाने पर रहने से कम नहीं था। यहां बराबर दंगे होते रहते थे। पर कोंडाबाई

के लिए ज्यादा किराया देना संभव नहीं था।

कोंडाबाई गिरन गांव के एक टेक्सटाइल मिल में काम करने लगी। बाबू भी उसी मिल में काम करने लगा।

दीक्षा

बाराचाली में बाबू राष्ट्रीय विचारधारा के एक मुस्लिम व्यक्ति के संपर्क में आए जो शिक्षक थे। बाबू उन्हें चाचा कहता था। उनकी यह सोच थी कि 'जिस मिट्टी में मैं पलकर बड़ा हुआ हूँ, उसी की मैं संतान हूँ। अपने देश को अंग्रेजों की दास्ता से मुक्त कराना मेरा कर्तव्य है।

चाचा ने बाबू को अंग्रेजों की बर्बरता, उनकी आक्रमकता तथा अन्याय के बारे में विस्तार से सारी बातें बताई–समझाई। एक तरह से तरुण मिल मजदूर बाबू गेनू में देशभक्ति की आग भर दी। चाचा की कृपा से बाबू असहयोग एवं सत्याग्रह के आंदोलन को अब भली–भांति समझने लगे थे। 1926 में बाबू स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने लगे। 1927 के मई–जून में देश में सभी जगह जातीय दंगे भड़क उठे। ऐसे समय में बाबू जिस बस्ती में रहता था उसमें बाबू ने अपने मित्र प्रह्लाद के साथ मिलकर सामंजस्य एवं सौहार्द बनाने का कार्य किया। यह एक ऐसा कार्य था जो बड़े–बड़े नेताओं के लिए दुर्लभ था, परंतु स्वयं अतीव विश्वास, निष्ठा और श्रद्धा के कारण इन दोनों ने असंभव को भी संभव कर दिखाया।

स्वदेशी आंदोलन

महात्मा गांधी के आह्वान पर बाबू गेनू जैसे समर्पित कार्यकर्ताओं के प्रयास से 'सूत कातना' एक सुलभ देशभक्ति के साधन के रूप में देशभर में अपना गया। घर–घर में महिलाएं, बच्चे और लड़कियां सूत कातने लगीं। कार्यालय और फैक्ट्रियों में काम करने वाले कर्मचारियों और मजदूरों को भी सूत कातने में राष्ट्र भक्ति का भाव अनुभव होने लगा। अंग्रेजों के वस्त्रोद्योग के लिए यह एक चुनौती थी। दिन–प्रतिदिन तेज होते इस आंदोलन ने उनकी चैन छीन ली।

1930 की दीपावली के बाद विदेशी माल बहिष्कार का आंदोलन जोर पकड़ने लगा। जगह–जगह प्रदर्शन होने लगे। स्थान–स्थान पर विदेशी कपड़ों की होलियां जलाई जाने लगीं। मुंबई तो मशहूर बंदरगाह था। विदेश व्यापार का अंतर्राष्ट्रीय स्थान मुंबई ही था। यहां से देश में सभी जगहों पर माल भेजा जाता था। कांग्रेस ने सोचा कि 'मूल कुठार' की नीति से मुंबई में ही बहिष्कार और विदेशी माल के विरोध में पिकेटिंग करेंगे।

यदि मुंबई में सत्याग्रह द्वारा विदेशी माल रोका गया तो स्वाभाविक रूप से यह ज्यादा प्रभावी होगा। इसलिए यहीं विदेशी माल रोको। धरना दो। घेरा डालो। बाबू गेनू उत्तेजित हुआ। अपने 'तानाजी पथक' को तैयार किया। सभी स्वयंसेकों ने मिलकर तय किया कि विदेशी वस्तुओं का व्यापार करने वालों को ट्रकों से यातायात करने से रोकेंगे। इसकी जानकारी लेनी शुरू की कि विदेशी माल कहां से आता है और कहां भेजा जाता है तथा कौन करते हैं यह काम? जानकारी लेकर उसने तय किया कि 12 दिसंबर को सत्याग्रह होगा। कांग्रेस न सत्याग्रह घोषित किया।

12 दिसंबर 1930 को शुक्रवार का दिन था। मुंबई के कालबादेवी इलाके में मैनचेस्टर का गोदाम विदेशी माल से भरा था, जिसे दामोदर खेतसी और कसम रहमान ने खरीद लिया था। इन दोनों ने तय किया कि लॉरियों में भरकर यह माल मुंबई के कोट मार्किट में ले जाएंगे। मैनचेस्टर मिल के प्रतिनिधि जॉर्ज फ्रेजर को यह जिम्मेवारी सौंपी गई। मुंबई के मुळजी जेठा मार्किट से इंग्लैंड में बने हुए ऊनी कपड़ों को ट्रकों में जाना था, जिनको रोकने की जिम्मेवारी मुंबई शहर की कांग्रेस पार्टी ने बाबू गेनू एवं उसके 'तानाजी पथक' को सौंपी।

इस आदेश के अनुसार बाबू गेनू ने तैयारी की। उसके सहायक थे प्रह्लाद राऊत और शंकर आवटे। सत्याग्रहियों ने कालबादेवी रोड पर विदेशी कपड़ों से भरी लॉरियां, ट्रक आदि को रोकने का निश्चय किया। इस कार्यक्रम को घोषित किया गया। अतः मुंबई के नागरिक सत्याग्रह देखने के लिए उमड़ पड़े।

मिस्टर फ्रेजर को इसकी जानकारी थी। इसलिए उसने प्रिन्सेस रोड पुलिस थाने के पुलिस बल को पहले ही बुला लिया। कालबादेवी रोड पर से विदेशी माल से भरे हुए ट्रक दौड़ने लगे। बाबू के कार्यकर्ताओं ने लॉरी रुकवाई। 'भारत माता की जय', 'वंदे मातरम' नारों ने जोर पकड़ा। देखते देखते कई सत्याग्रही लॉरी के नीचे लेट गए। पुलिस ने बलपूर्वक सबको हटा दिया।

लॉरी थोड़ी–थोड़ी अब आगे बढ़ती गई। बाबू गेन ने आवाज लगाई 'भारत माता की जय' और लॉरी के सामने लेट गए। अंग्रेज सार्जेंट ने लॉरी ड्राइवर से कहा 'लारी चलाओ, ये हरामखोर अगर मर भी गए तो कोई बात नहीं।' ड्राइवर भारतीय था – बलवीर सिंह नाम था। उसने लॉरी रोका दी। अग्रेज सार्जेंट को गुस्सा आया उसने बलवीर सिह को लॉरी की ड्राइवर सीट से हटाया और स्वयं लॉरी चलानी शुरू कर दी। गाड़ी बाबू गेनू की खोपड़ी के ऊपर से गुजर गई। वह गंभीर रूप से जक्ष्म हो गए। सड़क पर चारों तरफ खून ही खून बिखर गया।

भारतीय पुलिस अधिकाारियों ने बाबू को गोकुल दास तेजपाल अस्पताल में दाखिल करवाया। बाबू को 12.30 बजे ऑपरेशन टेबल पर ले जाया गया, जहां 4.30 बजे उन्होंने प्राण त्याग दिए।

13 दिसंबर को ही बाबू गेनू को श्रद्धांजलि देने मुंबई शहर में पूर्ण बंद का सफल आयोजन किया गया। शहर के सभी विद्यालय एवं महाविद्यालय बंद रखे गए। व्यापारियों ने भी अपनी दुकानें बंद रखीं। हरेक वर्ष 12 दिसंबर को राष्ट्रभक्त नागरिकों को बाबू गेनू का यह बलिदान हमेशा याद रखना चाहिए। 'स्वदेशी का स्वीकार एवं विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार' बाबू गेनू को दी जानी वाली सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ❑

रिटेल में विदेशी कंपनियों को अनुमति

बर्बादी की दस्तक

भारतीय रिटेल क्षेत्र जो 3.5 करोड लोगों को प्रत्यक्ष और 1.5 करोड़ लोगों को अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करता है, जो जीडीपी का 14 प्रतिशत भाग अर्जित करता है और इसके बाजार का आकार 30 लाख करोड़ रुपए से अधिक का है। सरकार द्वारा गैर–जिम्मेदाराना तरीके से रिटेल बाजार को वालमार्ट व अन्य बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हाथों में सौंपने की तैयारी की गई है।

■ दीवान अमित अरोड़ा

केंद्र सरकार ने हाल में एक बड़ा फैसला लेते हुए मल्टी ब्रांड में 51 प्रतिशत और एकल ब्रांड रिटेल में 100 प्रतिशत सीधे विदेशी निवेश को अनुमति देकर करीब 30 लाख करोड़ रुपए के रिटेल क्षेत्र में वालमार्ट, कारफोर और टैस्को जैसी बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों को भारत में प्रवेश की खुली छूट दे दी है।

सरकार के उक्त निर्णय के विरुद्ध समूचे विपक्ष भारतीय जनता पार्टी, वाम मोर्चा, बीजू जनता दल, समाजवादी पार्टी व यूपीए के महत्वपूर्ण घटक दल तृणमूल कांग्रेस ने कड़ा विरोध किया है तथा सरकार के उक्त निर्णय को अलोकतांत्रिक करार दिया है।

अखिल भारतीय व्यापार महासंघ ने उक्त निर्णय के विरोध में एक दिसम्बर को भारत बंद भी किया तथा प्रतिक्रिया व्यक्त की है कि सरकार के इस अदूरदर्शी निर्णय से देश के 25 करोड़ लोगों की रोजी–रोटी प्रभावित होगी।

6 जुलाई 2010 को भारत सरकार द्वारा एक चर्चा–पत्र जारी करने के बाद से ही देश के विभिन्न क्षेत्रों में सामाजिक व व्यापारिक संगठनों द्वारा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के विरुद्ध विरोध प्रकट किया जा रहा था।

सरकार ने भी स्वीकार किया था कि संसदीय समिति ने भी इस हेतु अपना विरोध प्रकट किया है। भारतीय रिटेल क्षेत्र जो 3.5 करोड़ लोगों को प्रत्यक्ष और 1.5 करोड़ लोगों को अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करता है, जीडीपी का 14 प्रतिशत भाग अर्जित करता है और इसके बाजार का आकार 30 लाख करोड से अधिक का है। सरकार द्वारा गैर–जिम्मेदाराना तरीके से रिटेल बाजार को वालमार्ट व अन्य बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हाथों में सौंपने की तैयारी की गई है।

देखा जाए तो सरकार अमरीका की

सही मायनों में देखा जाए तो इस संगठन में शामिल अमरीका और भारत की 400 शीर्ष कंपनियों की बांछें खिल गई हैं जिसका अर्थ भी लगाया जा रहा है कि अमरीकी मंदी को दूर करने के लिए अमरीकी सरकार के दबाव के चलते भारत सरकार द्वारा अमरीकी व अन्य बहुराष्ट्रीय कंपनियों को इतना बड़ा भारतीय बाजार उपलब्ध करवाया जा रहा है।

बोली बोल रही है क्योंकि उक्त निर्णय सरकार ने वालमार्ट व अन्य बड़ी कंपनियों, अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष एवं अमरीकी सरकार द्वारा भाड़े पर लिए गए सलाहकारों की पूर्व निर्धारित रिपोर्टों व तर्कों के आधार पर लिया है।

गहराई से देखा जाए तो मंत्री समूह की सिफारिशों व अमरीकी सरकार के सुझावों में कोई अंतर दिखाई नहीं देता। अमरीका के बड़े व्यापारिक संगठन अमरीका–भारत व्यापार परिषद् (यू.एस. आई.बी.सी.) ने भारत सरकार के इस निर्णय का स्वागत करते हुए इसे एक साहसपूर्ण कदम बताया है, जबकि सही मायनों में देखा जाए तो इस संगठन में शामिल अमरीका और भारत की 400 शीर्ष कंपनियों की बांछें खिल गई हैं जिसका अर्थ भी लगाया जा रहा है कि अमरीकी मंदी को दूर करने के लिए अमरीकी सरकार के दबाव के चलते भारत सरकार द्वारा अमरीकी व अन्य बहुराष्ट्रीय कंपनियों को इतना बड़ा भारतीय बाजार उपलब्ध करवाया जा रहा है।

सरकार स्वदेशी उद्योगों, किसानों व छोटे दुकानदारों के संरक्षण की बात करती है तथा 10 करोड़ डॉलर के आवश्यक निवेश को बुनियादी सुविधाओं के विकास पर खर्च करने के लिए जरूरी मानती है व नियमों के तहत यह शर्त लगाती है कि इन बहुराष्ट्रीय कंपनियों को नीति के तहत 30 प्रतिशत तक उत्पाद घरेलू लघु और कुटीर उद्योगों से खरीदना होगा, लेकिन इन कंपनियों का पुराना इतिहास बताता है कि ये कंपनियां कभी भी सरकारी नियमों व शर्तों की पाबंद नहीं रहीं।

उदाहरणतया पंजाब में 'बैस्ट प्राइस'

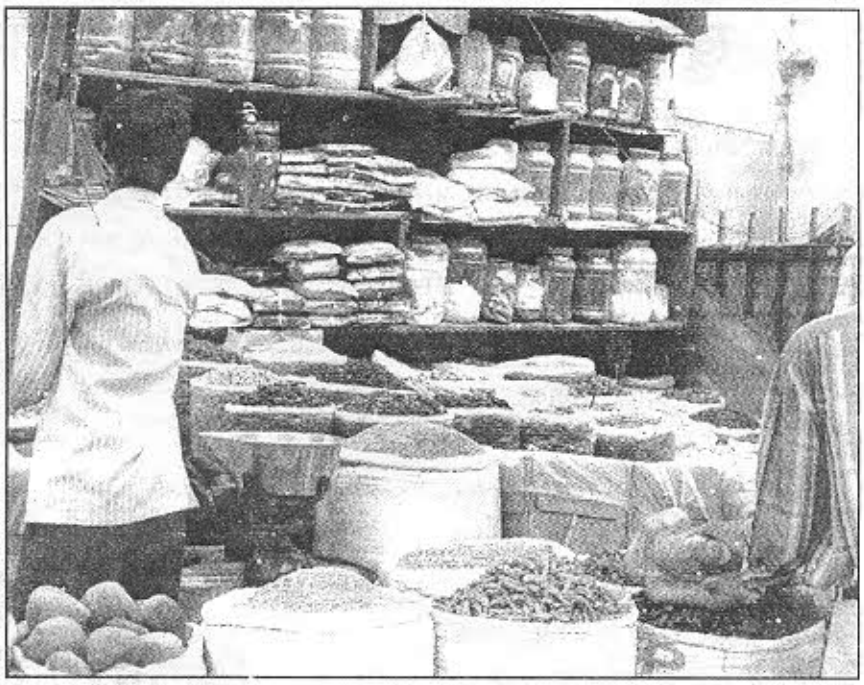

के नाम से भारती–वालमार्ट थोक बिक्री के नाम से अपने स्टोरों का संचालन कर रही है लेकिन इन स्टोरों में कहीं भी भारत सरकार अथवा राज्य सरकार के नियमों का पालन नहीं होता। थोक बिक्री के नाम पर फर्जी कार्ड बनाकर करियाना व सब्जी व्यापारियों के अतिरिक्त अन्य क्षेत्र के ग्राहकों को रिटेल में ही माल बेचा जा रहा है जिससे सरासर सरकारी नियमों की धज्जियां उड़ रही हैं।

सरकार इन कंपनियों के प्रवेश से आगामी तीन सालों में एक करोड़ लोगों को रोजगार मिलने की बात करती है तो इससे स्वदेशी उद्योगों व कुटीर तथा लघु उद्योगों को प्रभावित होने तथा छोटे दुकानदारों का व्यापार संकट में आने से 40 करोड़ तक रोजगार प्रभावित होने की आशंका है।

अमरीका में अगर वालमार्ट का इतिहास देखा जाए तो इस कंपनी ने वहां के स्थानीय उत्पादों की बजाय बाहर के देशों का सामान अपने स्टोरों में भरा हुआ है जिसमें ज्यादातर संख्या में चीन के सस्ते व हल्के उत्पादों की है, जिससे वहां की स्थानीय उत्पादन दर कम हुई है व उद्योग–धंधे बंद होने से बेरोजगारी बढ़ी है। मई 2011 के आंकड़ों के अनुसार अमरीका में इस समय बेरोजगारी 9.1 प्रतिशत है तथा वहां एक करोड़ 39 लाख लोग बेरोजगार हैं।

ये कंपनियां किसानों को फसल के लाभकारी मूल्य का लालच देकर धीरे–धीरे उनको अपने ऊपर निर्भर बना लेती है और बाद में कम दाम लेने को विवश करते हुए इन किसानों का शोषण करती हैं। महंगाई में कमी आने के सरकार के दावे भी खोखले हैं क्योंकि इन कंपनियों की नीति आरंभ में गलाकाट प्रतिस्पर्धा तथा बाद में एकाधिकार स्थापित करने की रही है। पेप्सी और कोका कोला का सबसे बड़ा उदाहरण हमारे सामने है कि अन्य भारतीय शीतल पेय बाजार से गायब होने के पश्चात ये कंपनियां मनमाने दाम वसूल रही है। इन बड़ी कंपनियों से मुकाबला करने के लिए घरेलू, कुटीर व लघु उद्योगों को प्रोत्साहन देना होगा। ❑

चिंतन

खुदरा बाजार में विदेशी कंपनियों का प्रवेश

खुदरा बाजार में एफडीआई की मंजूरी देकर सरकार ने छोटे–मझोले व्यापारियों, किसानों, दुकानदारों, फेरीवालों और खुदरा व्यापार से प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष तौर पर जुड़े और रोजी–रोटी कमाने वाले करोड़ों लोगों के पेट पर सीधे लात मारने का घिनौना काम किया है। गौरतलब है कि देश का रिटेल सेक्टर 23,562 करोड़ रूपये का है, इसमें 90 फीसदी से अधिक हिस्सेदारी छोटे दुकानदारों की है।

■ डॉ. आशीष वशिष्ठ

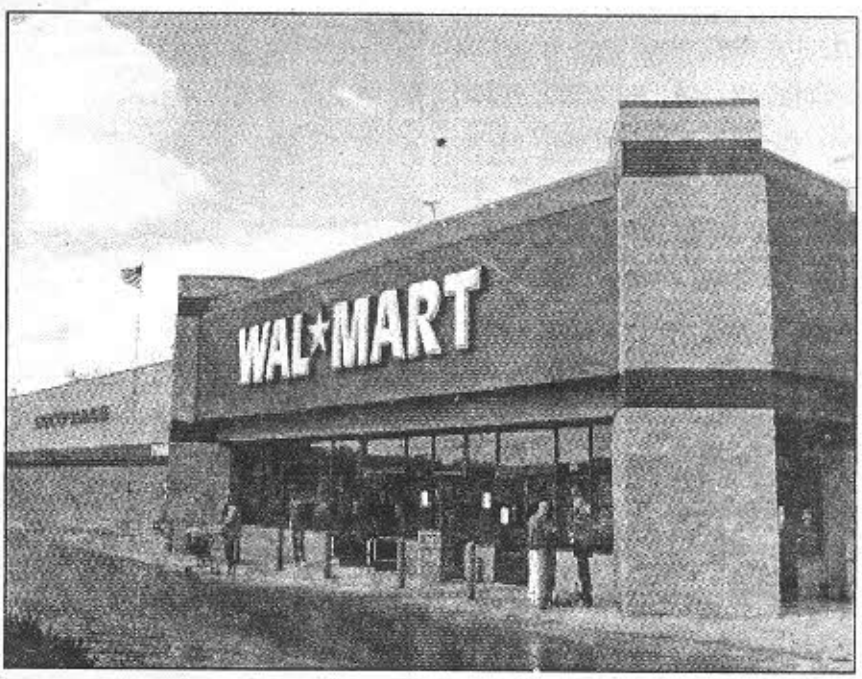

मल्टी ब्रांड खुदरा निवेश में 51 फीसदी और एकल ब्रांड में 100 फीसदी प्रत्यक्ष की अनुमति देकर अर्थशास्त्री प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने अपनी सरकार की नीति और नीयत का देशवासियों के सामने खुलासा कर दिया है कि वो किस हद तक विदेशी ताकतों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के समक्ष नतमस्तक है।

खुदरा बाजार में एफडीआई के अध्ययन के लिए बनी दो स्थायी संसदीय समितियों ने एफडीआई विरोध में विचार व्यक्त किये थे, लेकिन सब सुझावों ओर विरोधों को दरकिनार रखकर सरकार ने अमेरिका की चमचागिरी और बहुराष्ट्रीय कंपनियों की स्वामीभक्ति की अनूठी मिसाल पेश करने में कोई कोताई नहीं बरती।

खुदरा बाजार में एफडीआई की मंजूरी देकर सरकार ने छोटे–मझोले व्यापारियों, किसानों, दुकानदारों, फेरीवालों और खुदरा व्यापार से प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष तौर पर जुड़े और रोजी–रोटी कमाने वाले करोड़ों लोगों के पेट पर सीधे लात मारने का घिनौना काम किया है। गौरतलब है कि देश का रिटेल सेक्टर 23,562 करोड़ रूपये का है, इसमें 90 फीसदी से अधिक हिस्सेदारी छोटे दुकानदारों की है।

देश में वर्तमान में थोक व्यापार में 100 फीसदी एफडीआई की इजाजत है वहीं सिंगल ब्रांड रिटेलिंग में 51 फीसदी एफडीआई की अनुमति मिली हुई है इसे यूपीए सरकार ने बढ़ाकर 100 फीसदी कर दिया है। फिलहाल मल्टी ब्रांड रिटेलिंग में एफडीआई की इजाजत नहीं है, प्रस्तावित बिल में मल्टी ब्रांड रिटेलिंग को 51 फीसदी की इजाजत का प्रावधान किया गया है, जिस पर सारा हंगामा और बहस हो रही है।

भारतीय बाजारों में दिख रहे भारी मुनाफे को कमाने के लिए विदेशी कंपनियां किस कदर बेचैन है इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि खुदरा बाजार

भारतीय बाजारों में दिख रहे भारी मुनाफे को कमाने के लिए विदेशी कंपनियां किस कदर बेचैन है इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि खुदरा बाजार में विश्व की बड़ी कंपनी वालमार्ट ने मल्टी ब्रांड रिटेल क्षेत्र में एफडीआई का मार्ग प्रशस्त करने के लिए अमेरिकी रिटेल चेन वालमार्ट द्वारा भारतीय मसलों की लॉबिंग पर लगभग 70 करोड़ रूपए खर्च किए हैं। सरकार ने खुदरा बाजार में एफडीआई को मंजूदी दे दी है।

में विश्व की बड़ी कंपनी वालमार्ट ने मल्टी ब्रांड रिटेल क्षेत्र में एफडीआई का मार्ग प्रशस्त करने के लिए अमेरिकी रिटेल चेन वालमार्ट द्वारा भारतीय मसलों की लॉबिंग पर लगभग 70 करोड़ रूपए खर्च किए हैं। सरकार ने खुदरा बाजार में एफडीआई को मंजूदी दे दी है। आने वाले दिनों में वालमार्ट, टेस्को, केयर फोर, मेट्रो एजी और शक्चार्ज अंतर्नेमेंस जैसी तमाम बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत में अपने मेगा स्टोर खोल सकेंगी।

एन.एस.एस.ओ. के ताजा सर्वेक्षण के अनुसार खुदरा व्यापार में कुल श्रमशक्ति के आठ फीसदी अर्थात 3.31 करोड़ लोगों को रोजगार मिला हुआ है। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि एक व्यक्ति के परिवार में औसतन पांच सदस्य मानें तो कोई सोलह करोड़ से अधिक लोगों की रोजी–रोटी खुदरा व्यापार पर टिकी हुई है।

देश में लगभग 1.25 करोड़ से अधिक खुदरा कारोबार करने वाली दुकानें है और इसमें सिर्फ चार फीसदी दुकानें ऐसी हैं जो पांच सौ वर्ग मीटर से ज्यादा बड़ी हैं। इसके विपरित अमेरिका में सिर्फ नौ लाख खुदरा दुकानें हैं जो भारत की तुलना में तेरह गुना बड़े खुदरा बाजार की जरूरतों को पूरी करती हैं।

खुदरा दुकानों की उपलब्धता के मामले में भारत दुनिया में पहले स्थान पर

है। एसी नेल्सन और केएसए टैक्नोपैक के अनुसार भारत में प्रति एक हजार व्यक्तियों पर ग्यारह खुदरा दुकानें हैं। इससे स्पष्ट है कि भारत में खुदरा व्यापार सिर्फ एक आर्थिक गतिविधि या कारोबार भर नहीं है बल्कि यह करोड़ों लोगों को लिए जीवन–मरण का प्रश्न है। सन 1997 में थोक व्यापार (कैश एंड कैरी) में 100 फीसदी और 2006 में एकल ब्रांड खुदरा व्यापार में 51 फीसदी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति पहले ही दी जा चुकी है।

खुद सरकारी आंकड़ों के मुताबिक थोक व्यापार में अब तक लगभग 777.9 करोड़ रूपए और एकल ब्रांड खुदरा व्यापार में 900 करोड़ रूपए का एफडीआई आ चुका है जो कि सरकार के अनुमान से बेहद कम है। फिर रिटेल क्षेत्र कृषि के बाद अर्थव्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण और संवेदनशील क्षेत्र है। जीडीपी में भले ही खुदरा व्यापार का योगदान लगभग आठ फीसदी के आसपास है लेकिन उससे भी बड़ी बात यह है कि इसमें कृषि क्षेत्र के बाद सबसे अधिक लोगों को रोजगार मिला हुआ है।

रिटेल में एफडीआई समर्थक आपूर्ति श्रृंखला से जिन बिचौलियों को हटाने की बात कर रहे हैं वे कोट–पैंट–टाई पहनने वाले नहीं हैं। भारत में बिचौलिए बैलगाड़ी, ट्रैक्टर, टेम्पू चलाने वाले, ट्रांसपोर्टर, एजेंट और छोटे कारोबारी हैं। दूसरी ओर वैश्विक दिग्गज कंपनियों के लिए ब्रांड एंबेसडर बिचौलियों का काम करते हैं जो कंपनियों से करोड़ों रूपए लेते हैं। इसके अलावा बिजली खपत, गोदाम और ट्रांसपोर्टर के उनके खर्चे भी बहुत ज्यादा होते हैं।

हमारे बिचौलिए न केवल अर्थव्यवस्था

खुदरा दुकानों की उपलब्धता के मामले में भारत दुनिया में पहले स्थान पर है। एसी नेल्सन और केएसए टैक्नोपैक के अनुसार भारत में प्रति एक हजार व्यक्तियों पर ग्यारह खुदरा दुकानें हैं। इससे स्पष्ट है कि भारत में खुदरा व्यापार सिर्फ एक आर्थिक गतिविधि या कारोबार भर नहीं है बल्कि यह करोड़ों लोगों को लिए जीवन–मरण का प्रश्न है।

देखा जाए तो भारत में महंगाई बेलगाम बनी है जब से बड़े कारोबारी घरानों का खुदरा कारोबार में प्रवेश (2005 से) हुआ है। इन कंपनियों के पास बड़े–बड़े गोदाम होते हैं जिनमें बड़े पैमाने पर जमाखोरी की जाती है इसीलिए मुरली मनोहर जोशी की अध्यक्षता वाली 42 सदस्यीय संसदीय समिति ने स्पष्ट कहा था कि खुदरा बाजार में संगठित वर्ग और विदेशी कंपनियों के निवेश की अनुमति से छोटे स्तर के व्यवसायी बुरी तरह प्रभावित होंगे और उनके लिए बाजार में अपना अस्तित्व कायम रख पाना कठिन होगा।

को मजबूती देते हैं बल्कि देश के सामाजिक ढांचे को भी ठीक रखने में सहायता करते हैं। देखा जाए तो भारत में महंगाई बेलगाम बनी है जब से बड़े कारोबारी घरानों का खुदरा कारोबार में प्रवेश (2005 से) हुआ है। इन कंपनियों के पास बड़े–बड़े गोदाम होते हैं जिनमें बड़े पैमाने पर जमाखोरी की जाती है इसीलिए मुरली मनोहर जोशी की अध्यक्षता वाली 42 सदस्यीय संसदीय समिति ने स्पष्ट कहा था कि खुदरा बाजार में संगठित वर्ग और विदेशी कंपनियों के निवेश की अनुमति से छोटे स्तर के व्यवसायी बुरी तरह प्रभावित होंगे और उनके लिए बाजार में अपना अस्तित्व कायम रख पाना कठिन होगा।

संसदीय समिति ने यह भी सुझाव दिया कि सरकार एक राष्ट्रीय खुदरा माल नियामक कानून लाए जिससे बाजार में प्रतिस्पर्धा के मार्ग विधिवत रूप से खुले रहें और कोई भी कंपनी बाजार पर अपना एकाधिकार जमा कर मनमानी न कर सके। बिक्री की एकाधिकारी प्रवृत्तियों से उत्पादकों की आय घटती है क्योंकि उन्हें अपना उत्पाद बेचने के लिए सीमित विकल्प रहते हैं। 1997 से 2002 के बीच कॉफी बीन की फुटकर कीमतें 27 फीसदी घटी जबकि किसानों को चुकाई जाने वाली कीमतें 80 फीसदी तक गिर गईं। दुनिया मे 50 करोड़ कॉफी उपभोक्ता हैं लेकिन कॉफी के व्यापार का 45 फीसदी चार बड़ी एग्रीबिजनेस कंपनियों के हाथ में है।

वाणिज्य मंत्रालय के स्थायी समिति की रिपोर्ट में एफडीआई के विरोध में कड़ी टिप्पणी की गई है। इस समिति ने विस्तृत अध्ययन के बाद कहा है कि बहुराष्ट्रीय और घरेलू कंपनियां सिंगल ब्रांड रिटेल में एफडीआई के नियमों का सही तरीके से

पालन नहीं कर रही हैं। एक ही शोरूम में कई ब्रांड बेचे जा रहे हैं। इसके लिए ब्रांडों की बंडलिंग की रणनीति अपनाई जा रही है। यह भी एक तथ्य है कि सिंगल ब्रांड रिटेल में एफडीआई की अनुमति देने के बाद अप्रैल 2006 से मार्च 2010 तक चार साल में मात्र 901 करोड़ रूपए की एफडीआई आयी है।

समिति ने कहा था कि बिना किसी रेगुलेटरी फ्रेमवर्क के निजी क्षेत्र की बड़ी घरेलू रिटेल चेन के विस्तार पर भी अंकुश लगाया जाना चाहिए। लेकिन सरकार ने अभी तक इस दिशा में कोई ठोस कदम नहीं उठाया है। पिछले चार साल में रिटेल स्टोर की ओर से कृषि उपज के भंडारण व उससे जुड़ी बुनियादी सुविधाओं के लिए कोई खास पहल नहीं की गई है।

कैश एंड कैरी बैक एंड आपरेशन में सौ फीसदी एफडीआई के बावजूद कंपनियों ने बुनियादी सुविधाओं के विकास में बड़ा निवेश नहीं किया। यही नहीं इन कंपनियों ने अनुबंध खेती के नाम पर किसानों के साथ संबंध स्थापित करने की कोशिश तो की, लेकिन करार की अनुचित शर्तों के कारण यह कोशिश भी विफल हो गई। इस अनुभव को झेल चुके किसानों का अनुबंध खेती से मोहभंग हो चुका है। ❑

किसानों की त्रासदी

साल दर साल हजारों किसान बढ़ते कर्ज का बोझ वहन नहीं कर पाते और खुद को मार डालते हैं। चाहे यह फसल की विफलता हो, लागत में वृद्धि, बिचौलियों के हाथों शोषण हो, सबकी कहानी समान है। किसानों की आत्महत्या के बढ़ते आंकड़ों के अलावा, बहुत बड़ी संख्या में किसान अपने शरीर के अंगों को बेच रहे हैं। छोटे और सीमांत किसान कृषि से पलायन कर भूमिहीन मजदूर के रूप में काम कर रहे हैं। भारतीय कृषि भयावह संकट से गुजर रही है, किंतु इस पर कोई भी जरा भी ध्यान नहीं दे रहा है।

■ देविन्दर शर्मा

टाइम बम बस फटने ही वाला है। पिछले 15 वर्षों के दौरान कृषि में लगे परिवार बर्बाद हो गए, अनगिनत महिलाएं विधवा हो गईं, गांव के गांव निराशा में डूब हो गए। इतना होने पर भी राजनीतिक सत्ता कारगर कदम उठाने को तैयार नहीं है।

देश के गांवों में मौत का तांडव चल रहा है, किंतु नई दिल्ली में सरकार को जैसे इससे कोई मतलब ही नहीं है। खेती मौत की फसल में बदल चुकी है। 1995 से 2010 के बीच के 15 साल के अंतराल में ढाई लाख से अधिक किसान कर्ज की अदायगी में विफलता के बाद होने वाले अपमान से बचने के लिए मौत को गले लगा चुके हैं।

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार केवल 2010 में ही 15,964 किसान आत्महत्या कर चुके हैं। पिछले 30 दिनों के भीतर ही 90 किसान आंध्र प्रदेश में जान गंवा बैठे हैं। इसके अलावा, विदर्भ में तो सात दिनों में ही 17 किसान मौत के गाल में समा गए। नवंबर में केरल में चार किसानों ने कीटनाशक पी लिया और पंजाब में इसी माह दो किसानों ने खुदकुशी कर ली।

विडंबना यह है कि यह वह समय था जब नीति–निर्माता और मीडिया कर्ज में डूबी किंगफिशर एयरलाइंस को बेलआउट पैकेज देने पर बहस कर रहे थे। शराब उद्योगपति विजय माल्या की यह एयरलाइन गंभीर संकट में फंसी है और प्रधानमंत्री मालदीव में सार्क सम्मेलन से लौटते हुए इस संकटग्रस्त एयरलाइन को बचाने का वायदा करते हैं।

वर्ष 2010 में जिन 15,964 किसानों ने आत्महत्या की है वे भी दो कर्ज में दबे थे। साल दर साल हजारों किसान बढ़ते कर्ज का बोझ वहन नहीं कर पाते और खुद को मार डालते हैं। चाहे यह फसल की विफलता हो, लागत में वृद्धि, बिचौलियों के हाथों शोषण हो, सबकी कहानी

अब किसानों को लेजर लैंड लेवलर, प्लांटर्स, टर्बो सीडर, रोटेरी डिस्क ड्रिल जैसे महंगे उपकरण खरीदने को कहा जा रहा है। इस प्रकार के तमाम नए उपकरण किसानों की लागत बढ़ा रहे हैं। परिणामस्वरूप किसान कर्ज के दलदल में धंस रहे हैं और कृषि उपकरण कंपनियों का मुनाफा बढ़ता जा रहा है। ट्रैक्टरों का मामला लें, कभी संपन्नता का प्रतीक ट्रैक्टर अब आत्महत्या का संकेतक बन गया है। ट्रैक्टर रखने वाले हर दूसरे किसान पर कर्ज का बोझ बढ़ गया है।

वास्तव में, पिछले 15 सालों में इतनी कमेटियां बन चुकी हैं कि मैं उनकी गिनती भूल गया हूं। विदर्भ में इस दौरान 20 कमेटियां अपनी रिपोर्ट पेश कर चुकी हैं और फिर भी मौत का आंकड़ा लगातार बढ़ता ही जा रहा है। बुंदेलखंड भी अकादमिक अध्ययनों और रिपोर्टों का विषय बना हुआ है। किसानों की खुदकुशी राजनीति का अखाड़ा भी बन चुकी हैं।

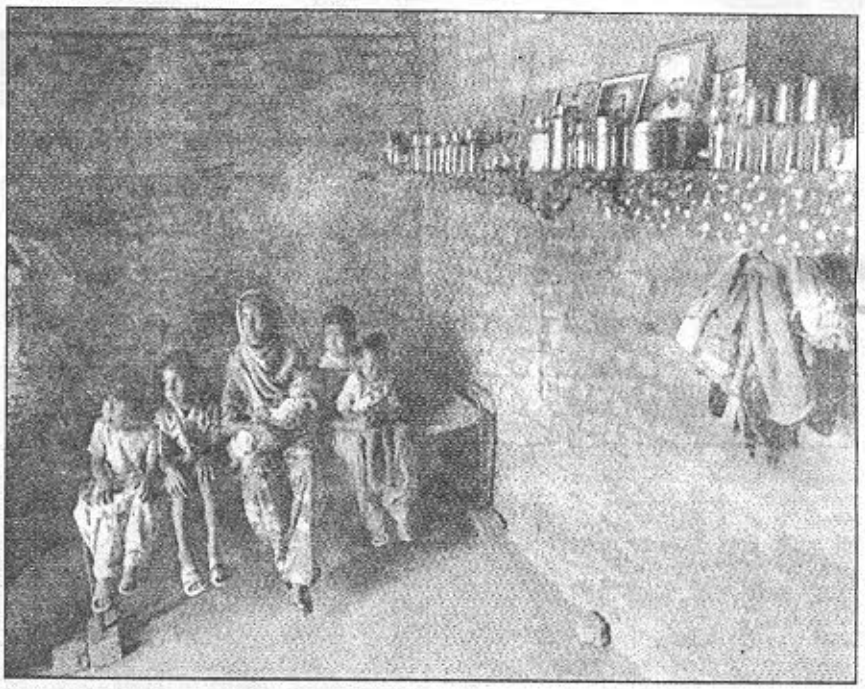

समान है।

किसानों की आत्महत्या के बढ़ते आंकड़ों के अलावा, बहुत बड़ी संख्या में किसान अपने शरीर के अंगों को बेच रहे हैं। छोटे और सीमांत किसान कृषि से पलायन कर भूमिहीन मजदूर के रूप में काम कर रहे हैं।

भारतीय कृषि भयावह संकट से गुजर रही है, किंतु इस पर कोई भी जरा भी ध्यान नहीं दे रहा है। कृषि की भयावह त्रासदी पर कभी गंभीर प्रतिक्रिया देखने को नहीं मिली, सिवाय इसके कि एक और कमेटी की औपचारिकता पूरी कर दी जाती है। उदाहरण के लिए केरल में मुख्यमंत्री ओमेन चांडी ने बड़ी तत्परता से अतिरिक्त मुख्य सचिव सी जयकुमार के नेतृत्व में एक उच्च स्तरीय जांच कमेटी का गठन कर दिया।

वास्तव में, पिछले 15 सालों में इतनी कमेटियां बन चुकी हैं कि मैं उनकी गिनती भूल गया हूं। विदर्भ में इस दौरान 20 कमेटियां अपनी रिपोर्ट पेश कर चुकी हैं और फिर भी मौत का आंकड़ा लगातार बढ़ता ही जा रहा है। बुंदेलखंड भी अकादमिक अध्ययनों और रिपोर्टों का विषय बना हुआ है। किसानों की खुदकुशी राजनीति का अखाड़ा भी बन चुकी हैं।

कुछ माह पहले आंध्र प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू हैदराबाद में बेमियादी भूख हड़ताल पर बैठे थे। यह देखकर कांग्रेस वाईएसआर के सांसद जगनमोहन रेड्डी ने भी 48 घंटे की भूख हड़ताल की। दोनों नेताओं ने ऐसे किसानों का क्षतिपूर्ति पैकेज बढ़ाने की मांग की जो प्राकृतिक आपदा के कारण अपनी फसल गंवा चुके हैं।

बढ़ा हुआ क्षतिपूर्ति पैकेज मिलना तो दूर, पश्चिम और पूर्व गोदावरी जिलों में तो हालात इतने खराब हो चुके हैं कि इस साल किसान फसल अवकाश पर चले गए हैं। उन्होंने धान की फसल बोने से इंकार कर दिया है, क्योंकि पिछले सीजन की उपज सरकार ने अब तक नहीं खरीदी है।

उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, उड़ीसा और मध्य प्रदेश में भी किसानों के धान के खरीदार ही नहीं हैं। पंजाब के किसानों ने भी धमकी दी है कि अगर न्यूनतम समर्थन मूल्य में पर्याप्त वृद्धि नहीं की गई तो वे अगले साल फसल अवकाश पर चले जाएंगे। केवल राजनेताओं को ही दोष क्यों दें, हर विनाश बाजार के अवांछित रसायनों और प्रौद्योगिकी व्यापार की उर्वर भूमि होता है। कई सालों से जैव प्रौद्योगिकी बीज कंपनियां आनुवांशिक संवर्धित कपास बीज को प्रोत्साहित कर रही हैं। वे इन बीजों को घटती फसल उत्पादकता का जवाब बता रही हैं और दावा कर रही हैं कि इनसे किसानों की आय बढ़ जाएगी।

सरकार के समर्थन से आक्रामक मार्केटिंग अभियान के कारण देश के कपास उत्पादन का 90 फीसदी बीटी कॉटन से हो रहा है। फिर भी कोई सवाल नहीं कर रहा है कि विदर्भ और आंध्र प्रदेश के जिन किसानों ने पिछले एक माह के दौरान खुदकुशी की हैं, वे कपास उत्पादक ही थे। कृषि के संकट का समाधान प्रौद्योगिकी नहीं है। अगर प्रौद्योगिकी इसका जवाब होता तो फिर आत्महत्या

करने वाले किसानों में से 70 फीसदी कपास उत्पादक नहीं होते।

प्रमुख कृषि वैज्ञानिक महंगे उपकरणों और रसायनों से आगे सोच ही नहीं पाते। नियमित अंतराल पर नए–नए उपकरण पेश किए जा रहे हैं। यहां तक कि विश्व बैंक समर्थित संवर्धित कृषि भी भारी–भरकम कृषि उपकरणों पर आधारित है। अब किसानों को लेजर लैंड लेवलर, प्लांटर्स, टर्बो सीडर, रोटेरी डिस्क ड्रिल जैसे महंगे उपकरण खरीदने को कहा जा रहा है।

इस प्रकार के तमाम नए उपकरण किसानों की लागत बढ़ा रहे हैं। परिणामस्वरूप किसान कर्ज के दलदल में धंस रहे हैं और कृषि उपकरण कंपनियों का मुनाफा बढ़ता जा रहा है। ट्रैक्टरों का मामला लें। कभी संपन्नता का प्रतीक ट्रैक्टर अब आत्महत्या का संकेतक बन गया है। ट्रैक्टर रखने वाले हर दूसरे किसान पर कर्ज का बोझ बढ़ गया है। पंजाब एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी के एक अध्ययन के अनुसार, पंजाब के 89 फीसदी किसान कर्ज में डूबे हैं। प्रति कृषि परिवार पर पौने दो लाख रुपये से भी अधिक कर्ज है। दूसरे शब्दों में प्रति हेक्टेयर भूमि पर 50,140 रुपये का कर्ज है। पिछले कुछ वर्षों में किसानों पर कर्ज के बोझ में बढ़ोतरी हुई है। इसके बावजूद नीति निर्माता, अर्थशास्त्री और वैज्ञानिक ऐसा कृषि मॉडल तैयार करने में विफल रहे हैं जो इस कर्ज के दुष्चक्र को खत्म कर सके।

प्रति कृषि परिवार पर पौने दो लाख रुपये से भी अधिक कर्ज है। दूसरे शब्दों में प्रति हेक्टेयर भूमि पर 50,140 रुपये का कर्ज है। पिछले कुछ वर्षों में किसानों पर कर्ज के बोझ में बढ़ोतरी हुई है। इसके बावजूद नीति निर्माता, अर्थशास्त्री और वैज्ञानिक ऐसा कृषि मॉडल तैयार करने में विफल रहे हैं जो इस कर्ज के दुष्चक्र को खत्म कर सके।

मुझे चारों तरफ से घिरे हुए कृषक समुदाय के लिए राहत की कोई किरण नजर नहीं आती। कारण सीधा है। किसान शक्तिशाली लॉबी के रूप में नहीं उभर पाए हैं। यह इस उदाहरण से समझा जा सकता है – विदर्भ में हजारों किसान आत्महत्या कर रहे हैं, जबकि उसी क्षेत्र के गन्ना किसानों ने पांच दिन की भूख हड़ताल कर गन्ने के दामों में वृद्धि करा ली है। उत्तर प्रदेश में भी गन्ना किसानों ने आंदोलन छेड़ा था और सरकार ने उन्हें उपकृत कर दिया था। शेष कृषक समुदाय को भी समझना चाहिए कि लोकतंत्र में केवल जनता का दबाव ही काम करता है। ❑

:: सूचना ::

स्वदेशी पत्रिका साम्राज्यवाद के खिलाफ एक सशक्त आवाज है। पत्रिका को ऐसे लोगों से प्रतिक्रियाएं, रिपोर्ट या आलेख की अपेक्षा है जो राष्ट्रहित में सोचते हैं और देश के स्वावलम्बन के लिए कुछ करने की इच्छा रखते है। जरूरी नहीं कि आप पत्रकार या लेखक ही हों, अपने आसपास से जुड़ी चीजों के प्रति आपकी संवदेना है और आप शब्दों में उसे लिख सकते है तो हमें अवश्य लिख भेजें। साथ ही स्वदेशी पत्रिका में छपे लेख आपको कैसे लगते हैं, क्या आप इसमें कुछ नए विषयों का समायोजन चाहते हैं कृपया हमें अवश्य अवगत कराएं। आपके विचारों को हम प्राथमिकता के साथ प्रकाशित करने का भी प्रयास करेंगे।

हमारा पता है :–

संपादक

स्वदेशी पत्रिका

'धर्मक्षेत्र', सेक्टर–8, बाबू गेनू मार्ग, रामकृष्णपुरम्, नयी दिल्ली–110022

कैसे रूके रूपये का अवमूल्यन

रुपया किस हद तक गिरेगा और किस दिशा में जाएगा यह सब विशेष तौर पर यूरोपीय कर्ज संकट के समाधान पर निर्भर करेगा। फिलहाल आरबीआई ने रुपये को थामने के लिए हस्तक्षेप की कोई समयसीमा नहीं तय की है। आरबीआई बाजार पर नजर रख रहा है और जरूरत पड़ने पर इस दिशा में आगे बढ़ सकता है। विशेषज्ञों के अनुसार डॉलर का भाव 55 रुपये का स्तर भी छू सकता है . . रुपये का इतना अधिक अवमूल्यन देश की अर्थव्यवस्था के लिए घातक सिद्ध हो सकता है और इससे आने वाले समय में महंगाई और अधिक बढ़ेगी।

■ निरंकार सिंह

डॉलर के मुकाबले रुपये का लगातार अवमूल्यन यूपीए सरकार की नाकामयाबियों को ही उजागर करता है। हालांकि वह इसके लिए वैश्विक मंदी को जिम्मेदार बता रही है। महंगाई और बढ़ती ब्याज दरों के बीच रुपये की कमजोरी घरेलू अर्थव्यवस्था के लिए एक बड़े संकट के तौर पर उभरा है।

रुपये में गिरावट से निर्यातकों को फायदा हुआ है, लेकिन आयात पर नकारात्मक असर पड़ने से वित्तीय बोझ बढा है। सकल निर्यात के मुकाबले हमारा आयात लगभग दोगुना है इसलिए रुपये में गिरावट से विदेश व्यापार का कुल घाटा भी और अधिक बढ़ जाएगा। वित्तमंत्री प्रणब मुखर्जी के अनुसार वैश्विक वजहों से रुपये में गिरावट आ रही है और रिजर्व बैंक के हस्तक्षेप से कोई मदद मिलने की फिलहाल कोई उम्मीद नहीं है।

अमेरिका में कर्ज समाधान पर सहमति नहीं बन पाने के कारण भी बाजार में उथल–पुथल देखी जा रही है और शेयर बाजार को भारी झटका लगा है। रुपये की कीमत में रिकार्ड गिरावट अर्थव्यवस्था की पहले से ही सुस्त पड़ती रफ्तार को और मंद कर सकती है। रुपया डॉलर के मुकाबले पिछले 33 महीनों के न्यूनतम स्तर पर पहुंच गया है। रिजर्व बैंक की तरफ से हस्तक्षेप के बावजूद रुपये की गिरावट को रोका नहीं जा सका है।

रिजर्व बैंक के गवर्नर डी. सुब्बाराव के अनुसार पिछले कुछ दिनों में विनिमय दर में जो उतार–चढ़ाव आया है वह वैश्विक घटनाक्रम की वजह से हुआ है और नीति यही है कि यदि विनिमय दर में उतार–चढ़ाव से आर्थिक हालात प्रभावित होते हैं तो हस्तक्षेप किया जाए, लेकिन अभी तक इस बारे में कोई भी निर्णय नहीं किया गया है।

रुपया किस हद तक गिरेगा और किस दिशा में जाएगा यह सब विशेष तौर पर यूरोपीय कर्ज संकट के समाधान पर निर्भर करेगा। फिलहाल आरबीआई ने रुपये को थामने के लिए हस्तक्षेप की कोई समयसीमा नहीं तय की है। आरबीआई बाजार पर नजर रख रहा है और जरूरत पड़ने पर इस दिशा में आगे बढ़ सकता है।

अमेरिका में कर्ज समाधान पर सहमति नहीं बन पाने के कारण भी बाजार में उथल–पुथल देखी जा रही है और शेयर बाजार को भारी झटका लगा है। रुपये की कीमत में रिकार्ड गिरावट अर्थव्यवस्था की पहले से ही सुस्त पड़ती रफ्तार को और मंद कर सकती है।

रुपया डॉलर के मुकाबले पिछले 33

महीनों के न्यूनतम स्तर पर पहुंच गया है। रिजर्व बैंक की तरफ से हस्तक्षेप के बावजूद रुपये की गिरावट को रोका नहीं जा सका है।

कह सकते हैं कि सरकार ने भी एक तरह से स्वीकार कर लिया है कि इस पर पूरी तरह काबू पाना उसके वश में नहीं है। रुपये में और गिरावट की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। ऐसा होने पर न सिर्फ आर्थिक विकास दर की रफ्तार और मंद पड़ेगी, बल्कि महंगाई रोकने की सरकार की तमाम कोशिशों पर भी पानी फिरेगा।

वित्तीय मामलों के सचिव आर. गोपालन ने रुपये की गिरती कीमत को रोकने में सरकार की असमर्थता जताते हुए कहा कि रिजर्व बैंक एक सीमा तक ही रुपये की कीमत थाम सकता है। दरअसल, रुपया पिछले एक महीने से डॉलर के मुकाबले लगातार गिर रहा है। मगर सरकार अभी तक हस्तक्षेप नहीं कर रही थी। रिजर्व बैंक की तरफ से बहुत कम हस्तक्षेप हुआ, मगर बाजार का मूड देखकर केंद्रीय बैंक ने भी अपने कदम खींच लिए।

ऐसे समय में जब वैश्विक अर्थव्यवस्था में सुधार के लक्षण नहीं दिख रहे और भारतीय शेयर बाजार से विदेशी संस्थागत निवेशकों के भागने का सिलसिला जारी है तो रिजर्व बैंक विदेशी मुद्रा भंडार का इस्तेमाल खुलकर करने की स्थिति में नहीं है।

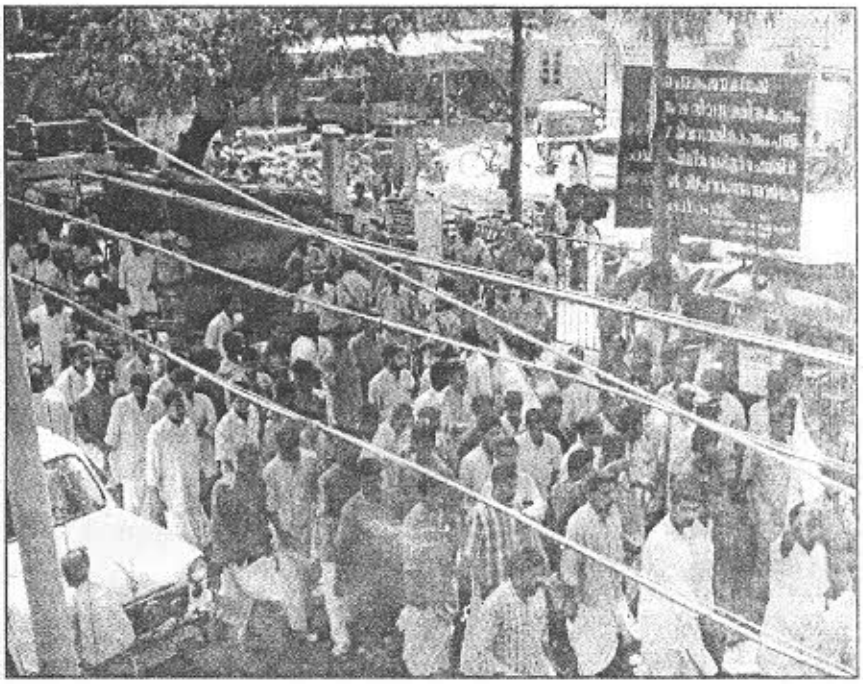

एसोचौम के महासचिव डीएस रावत बताते हैं कि भारत का विदेशी मुद्रा भंडार इतना विशाल नहीं है कि रिजर्व बैंक रुपये के अवमूल्यन को रोकने के लिए बाजार में अधिक सक्रिय हो। निर्यात के जरिये मोटी कमाई करने वाली घरेलू दवा कंपनियों को रुपये में आई मौजूदा गिरावट के कारण तगड़ा नुकसान पहुंच रहा है।

रुपये की घटती कीमत ने उद्योग जगत की भी नींद उड़ा दी हैं। महंगे कर्ज से बचने के लिए विदेशी कर्ज जुटाना अब कंपनियों के गले की फांस बन गया है। घरेलू के मुकाबले अंतर्राष्ट्रीय बाजार से सस्ता कर्ज उठाने वाली कंपनियों पर रुपये की कमजोरी भारी पड़ रही है।

दरअसल, आयातित माल का लागत बढ़ने से यह स्थिति बनी है। इंडियन ड्रग मैन्यूफैक्चरर्स एसोसिएशन (आईडीएमए) के अनुसार आयात लागत में बढ़ोतरी से निर्यात पर मिलने वाला लाभ खत्म हो जाएगा। जहां तक निर्यात का सवाल है तो जोखिम से बचने के लिए पूर्व में किए गए सौदों की वजह से ज्यादा कंपनियां लाभ नहीं उठा पाएंगी जिसका पूरे दवा उद्योग पर नकारात्मक असर होगा और उपभोक्ताओं को भी इससे नुकसान पहुंचेगा।

रुपये की घटती कीमत ने उद्योग जगत की भी नींद उड़ा दी हैं। महंगे कर्ज से बचने के लिए विदेशी कर्ज जुटाना अब कंपनियों के गले की फांस बन गया है। घरेलू के मुकाबले अंतर्राष्ट्रीय बाजार से सस्ता कर्ज उठाने वाली कंपनियों पर रुपये की कमजोरी भारी पड़ रही है।

इस साल डॉलर के मुकाबले रुपये में हुई तेज गिरावट ने कंपनियों की देनदारी में भारी भरकम वृद्धि कर दी है। घरेलू बाजार में कर्ज की दरें 14–15 प्रतिशत तक पहुंचने के कारण इस साल जनवरी से अब तक कंपनियों ने विदेशी बाजारों से विदेशी वाणिज्यिक कर्ज (ईसीबी) के जरिये तककरीबन 1,50,000 करोड रुपये का कर्ज जुटाया है।

विदेशी वाणिज्यिक कर्ज (ईसीबी) के जरिये कर्ज जुटाना कंपनियों को इसलिए भी आकर्षक लगा, क्योंकि उधारी की ब्याज दर जो पांच से सात प्रतिशत थी

को चुकाना अपेक्षाकृत आसान था। कम ब्याज दरों पर कर्ज उठाने वाली कंपनियों का यह दांव रुपये के कमजोर होने से उलटा पड़ गया है।

ब्रोकिंग फर्म एस.एस.एसी. ग्लोबल सिक्योरिटी की एक रिपोर्ट को मानें तो जनवरी से अब तक रुपये की कीमत में डॉलर के मुकाबले करीब 18 प्रतिशत तक की गिरावट आ चुकी है। जनवरी में एक डॉलर की कीमत 44 रुपये के आसपास थी जो अब 52.70 रुपये से ऊपर पहुंच गई है। दरअसल, विदेशी वाणिज्यिक कर्ज (ईसीबी) से कर्ज जुटाकर कंपनियां ब्याज दरों के बड़े अंतर का लाभ उठाना चाहती थीं। रुपये की कमजोरी से ऐसी कंपनियों पर करीब 27 हजार करोड़ रुपये का अतिरिक्त बोझ पड़ा है।

एसएमपी के विश्लेषक व रिसर्च प्रमुख जगन्नाधम थूनुंगटूला के अनुसार जिन कंपनियों ने डॉलर में उतार चढ़ाव से होने वाले जोखिम का बचाव कर लिया है उनका नुकसान कम होगा, लेकिन ऐसी कंपनियां जिन्होंने यह काम नहीं किया है अथवा जो ऐसा कर पाने में असमर्थ हैं उन्हें बड़ी हानि उठानी पड़ सकती है।

अमेरिकी डॉलर के मुकाबले रुपये की कीमत में तेज गिरावट, अर्थव्यवस्था के लिए बुरी खबर हो सकती है, लेकिन कुछ क्षेत्र इस गिरावट से फायदा भी उठा रहे हैं। प्रवासी भारतीयों और भारत में अपने परिवारों को धन भेजने वाले विदेश में रह रहे भारतीयों के लिए रुपये की गिरावट बेहद अच्छी खबर होती है। इसके अलावा विदेशी म्यूचुअल फंडों में निवेश करने वाले लोग और भारत में डॉलर जैसी विदेशी मुद्रा में आय अर्जित करने वाले प्रवासी भी फायदे में हैं।

विशेषज्ञों के अनुसार डॉलर का भाव 55 रुपये का स्तर भी छू सकता है, क्योंकि यूरो क्षेत्र के कर्ज संकट के कारण निवेशक डॉलर में निवेश को अधिक सुरक्षित मानकर ऊंचा दांव लगा रहे हैं। भारत में घूमने की योजना बना रहे लोगों के लिए भी रुपये में गिरावट फायदे का सौदा है। रुपये का इतना अधिक अवमूल्यन देश की अर्थव्यवस्था के लिए घातक सिद्ध हो सकता है और इससे आने वाले समय में महंगाई और अधिक बढ़ेगी। ❑

सदस्यता संबंधी सूचना

मान्यवर,,

स्वदेशी पत्रिका आज देश में चल रहे स्वदेशी आंदोलनों का स्थापित प्रतीक बन चुकी है। पिछले कई वर्षों से स्वदेशी पत्रिका ने असंगत एवं एकतरफा वैश्वीकरण, जनविरोधी आर्थिक उदारीकरण के विरोध एवं वैकल्पिक और रचनात्मक स्वदेशी आंदोलन के पक्ष में एक सक्रिय प्रहरी के नाते हमेशा आपको जागरूक बनाया है एवं आपसे संवाद स्थापित किया है। विगत कालखंड में इन सभी मुद्दों पर हमें आप जैसे सजग पाठकों का अपेक्षित सहयोग भी मिलता रहा है और भविष्य में भी मिलेगा ऐसा, विश्वास है।

आपसे आग्रह है कि स्वदेशी पत्रिका की आपकी सदस्यता अवधि यदि समाप्त हो गई हो तो कृपया पिछले समय से आगामी वर्ष तक की राशि धनादेश (मनीआर्डर), चेक एवं मांग पत्र (डिमांड ड्राफ्ट) के माध्यम से शीघ्र भेजने की कृपा करें। पत्रिका के लिफाफे के उपर चिपकाए गए पते की प्रथम पंक्ति में सदस्यता अवधि अंकित है। आप अपनी सदस्यता राशि "स्वदेशी पत्रिका" के नाम पत्रिका के कार्यालय के पते पर भेज सकते हैं। सदस्यता अद्यतन न हो पाने की स्थिति में वित्तीय कारणों से पत्रिका आगे जारी रखना कठिन होगा।

सदस्यता शुल्क निम्न प्रकार है।

स्वदेशी पत्रिका	वार्षिक	आजीवन
हिन्दी	100/–	1000/–
अंग्रेजी	100/–	1000/–

हमें आपका सहयोग स्वदेशी आंदोलन को राष्ट्रव्यापी एवं जनोन्मुखी बनाने में प्रमुख भूमिका निभाएगा। कृपया स्वदेशी पत्रिका स्वयं भी पढ़ें एवं अन्य को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। पत्रिका के संबंध में अपना निष्पक्ष विचार हमें अवश्य भेजें।

पता : स्वदेशी पत्रिका कार्यालय, 'धर्मक्षेत्र' शिव शक्ति मंदिर, सैक्टर–8, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली–22

एक निराशाजनक नीति

हाथ में पड़े हीरे को छोड़कर कांच के टुकड़े को नहीं पकड़ना चाहिए। इसी प्रकार अपनी क्षमता के अनुकूल सेवा क्षेत्र को नहीं छोड़ उत्पादन को नहीं पकड़ना चाहिए। एशियाई देशों ने उत्पादन का विस्तार निर्यात के आधार पर किया है। उत्पादित माल को मुख्यतः यूरोप एवं अमेरिका के विकसित देशों को भेजा जा रहा है। यूरोप एवं अमेरिका की अर्थव्यवस्था के फिसलने के साथ–साथ इन देशों पर संकट गहराएगा। हमें अनायास ही उस संकट को आमंत्रित नहीं करना चाहिए।

■ डॉ. भरत झुनझुनवाला

केंद्र सरकार ने नई उत्पादन नीति घोषित की है। कहा गया है कि एशियाई देशों की अर्थव्यवस्था में उत्पादन का हिस्सा 34 प्रतिशत है, जबकि भारत में मात्र 16 प्रतिशत। इसे अगले 10 वर्षों में 25 प्रतिशत पर ले जाना है। इस संकल्प में समस्या है।

अर्थव्यवस्था में उत्पादन के हिस्से में वृद्धि का अर्थ है कि दूसरे क्षेत्र के हिस्सों में संकुचन होगा। अर्थव्यवस्था में तीन मुख्य हिस्से माने जाते है – कृषि, उद्योग (उत्पादन) और सेवा। कृषि का हिस्सा घटाने का अर्थ होगा कि आधे नागरिकों की आय में कटौती होगी।

सेवा क्षेत्र में कटौती का अर्थ होगा कि हम सूर्योदय क्षेत्र को त्याग सूर्यास्त क्षेत्र की ओर बढ़ना चाहते हैं। 1951 में भारत में सेवा क्षेत्र का हिस्सा 33 प्रतिशत था, जो आज 55 प्रतिशत हो गया है। विकसित देशों में यह 75–80 प्रतिशत है।

सर्वत्र देखा जाता है कि आर्थिक विकास के साथ–साथ सेवा क्षेत्र का हिस्सा बढ़ता है। कारण कि आय में वृद्धि के साथ मनुष्य द्वारा सेवाओं की खपत में वृद्धि होती है। वह दो रोटी और एक टेलीफोन की ही खपत कर सकता है, परंतु संगीत, पर्यटन, ब्यूटी पार्लर की खपत बहुत बढ़ सकती है।

आगामी समय में सेवा क्षेत्र ही विश्व अर्थव्यवस्था का इंजन होगा। अतः सेवा को संकुचित करके उत्पादन को बढ़ाना घातक होगा।

हर देश को अपने प्राकृतिक संसाधन एवं क्षमताओं के अनुकूल धंधा करना चाहिए। दूसरे की नकल के सुपरिणाम नहीं होते हैं। सचिन तेंदुलकर बीए–एमए पढ़ते तो आगे न बढ़ पाते। उन्होंने अपनी क्षमता को परखते हुए क्रिकेट खेला और सफलता पाई। भारतवासियों की क्षमता अंग्रेजी भाषा और तीक्ष्ण बुद्धि की है। ये क्षमताएं सेवा क्षेत्र के लिए अनुकूल पड़ती हैं। दूसरे एशियाई देशों ने उत्पादन क्षेत्र का सहारा इसलिए लिया है, क्योंकि उनके पास सेवा क्षेत्र के लिए आवश्यक क्षमताएं नहीं हैं।

हाथ में पड़े हीरे को छोड़कर कांच

यदि चीन अपने पर्यावरण को नष्ट करके सस्ता माल बना रहा है तो भारत प्रतिस्पर्धा में पीछे हो जाता है। इसका उपाय है कि भारत चीन से आयातित सस्ते माल पर पर्यावरण टैक्स लगाए और निर्यातों पर पर्यावरण सब्सिडी दे। तब देश की सरहद में माल का दाम ऊंचा रहेगा और हम अपने पर्यावरण का संरक्षण कर सकेंगे। साथ–साथ निर्यातों पर सब्सिडी देकर हम विश्व बाजार में चीन के सस्ते माल के सामने टिक सकेंगे। परंतु उत्पादन पालिसी इस गंभीर मामले पर खामोश है।

के टुकड़े को नहीं पकड़ना चाहिए। इसी प्रकार अपनी क्षमता के अनुकूल सेवा क्षेत्र को नहीं छोड़ उत्पादन को नहीं पकड़ना चाहिए। एशियाई देशों ने उत्पादन का विस्तार निर्यात के आधार पर किया है। उत्पादित माल को मुख्यतः यूरोप एवं अमेरिका के विकसित देशों को भेजा जा रहा है। यूरोप एवं अमेरिका की अर्थव्यवस्था के फिसलने के साथ–साथ इन देशों पर संकट गहराएगा।

हमें अनायास ही उस संकट को आमंत्रित नहीं करना चाहिए। उत्पादन क्षेत्र में पर्यावरण की भारी क्षति होती है। खनन, जंगल की कटान, कार्बन उत्सर्जन, जल का प्रदूषण आदि समस्याएं उत्पादन क्षेत्र में गंभीर रहती हैं। इन समस्याओं को झेलने की हमारी क्षमता सीमित है, क्योंकि लोगों का घनत्व ज्यादा है। भारत में प्रति वर्ग किलोमीटर 333 व्यक्ति रहते हैं, जबकि चीन में 135 है।

भारत में जंगल, खुली जमीन, तालाब आदि का क्षेत्र कम है। तदानुसार हमारी प्रदूषण वहन करने की क्षमता भी कम है। अतः हमें स्वच्छ सेवा क्षेत्र को छोड़कर प्रदूषित उत्पादन क्षेत्र को नहीं पकड़ना चाहिए। सरकार की दलील है कि उत्पादन क्षेत्र में वृद्धि आने से आगामी वर्षों में 10 करोड़ रोजगार उत्पन्न होंगे, परंतु अब तक का रिकार्ड बिल्कुल विपरीत है।

वित्त मंत्रालय द्वारा प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार 1991 से 2008 के बीच संगठित निजी क्षेत्र में कृषि में एक लाख, उत्पादन में पांच लाख और सेवा में 16 लाख रोजगार उत्पन्न हुए हैं। अधिकतर रोजगार सेवा क्षेत्र में उत्पन्न हुए हैं। दरअसल उत्पादन क्षेत्र में आटोमैटिक मशीनों का इस्तेमाल ज्यादा हो रहा है। उत्पादन की मात्रा बढ़ रही है, परंतु रोजगार नहीं बन रहे हैं।

उत्पादन क्षेत्र के इस स्वभाव को देखते हुए 10 करोड़ रोजगार उत्पन्न करने की बात मात्र ढकोसला साबित होती है। ध्यान देने वाली बात यह है कि उत्पादन क्षेत्र में जो थोड़ी बहुत रोजगार सृजन की संभावना थी उसे भी क्रियान्वित होने में संदेह दिखाई देता है।

नई उत्पादन पालिसी में कहा गया है कि श्रम सघन उद्योगों को पर्याप्त समर्थन दिया जाएगा। इस समर्थन का क्या स्वरूप होगा, इस पर पालिसी खामोश है। चाहिए था कि श्रम–सघन क्षेत्रों पर एक्साइज ड्यूटी तथा सेल टैक्स की दरें न्यून रखी जातीं। तब श्रम–सघन उद्योग आटोमैटिक मशीनों की प्रतिस्पर्धा में खड़े रह सकते थे, परंतु पालिसी में श्रम–सघन उद्योगों को प्रोत्साहन देने के नाम पर केवल लीपापोती की गई है। उत्पादन पालिसी में कहा गया है कि दूसरे देशों द्वारा पर्यावरण संरक्षण के नाम पर लगाए गए टैक्स का विरोध किया जाएगा।

मूल रूप से यह मंतव्य स्वागत योग्य है। विकसित देश चाहते हैं कि पर्यावरण के नाम पर हमारे देश के सस्ते उत्पादों पर भारी टैक्स लगाकर इन्हें महंगा कर दें, परंतु इस समस्या का दूसरा पक्ष और भी ज्यादा महत्वपूर्ण है। हमें निर्यातों के लालच में अपने पर्यावरण की बलि नहीं चढ़ानी चाहिए।

भारत का प्रयास होना चाहिए कि पर्यावरण मानक का विरोध करने के साथ–साथ अपने पर्यावरण की होने वाली क्षति को रोकें। यहां समस्या दूसरे विकासशील देशों से उत्पन्न होती है। यदि चीन अपने पर्यावरण को नष्ट करके सस्ता माल बना रहा है तो भारत प्रतिस्पर्धा में पीछे हो जाता है। इसका उपाय है कि भारत चीन से आयातित सस्ते माल पर पर्यावरण टैक्स लगाए और निर्यातों पर पर्यावरण सब्सिडी दे। तब देश की सरहद में माल का दाम ऊंचा रहेगा और हम अपने पर्यावरण का संरक्षण कर सकेंगे।

साथ–साथ निर्यातों पर सब्सिडी देकर हम विश्व बाजार में चीन के सस्ते माल के सामने टिक सकेंगे, परंतु उत्पादन पालिसी इस गंभीर मामले पर खामोश है।

ऐसा प्रतीत होता है कि यह पालिसी पूर्णतया असफल होगी। मेरा अनुमान है कि अधिकारियों को ज्ञात है कि यह पालिसी मात्र एक कागज का टुकड़ा है। पालिसी का असल मुद्दा भूमाफियाओं को पोसने का है।

कहा गया है कि राष्ट्रीय निवेश एवं उत्पादन क्षेत्र बनाए जाएंगे। इनका न्यूनतम क्षेत्रफल 5000 हेक्टेयर होगा। इन क्षेत्रों में श्रम एवं पर्यावरण कानूनों को लागू करने की जिम्मेदारी क्षेत्र के कर्मचारियों के हाथ में होगी, न कि केंद्र अथवा राज्य सरकार के विभागों की।

समस्या यह है कि इन क्षेत्रों के बाहर लगे वर्तमान उद्योगों के प्रति भेदभाव किया जाएगा। जैसे कक्षा में बच्चे कमजोर हों तो तीक्ष्ण बुद्धि के बालक को दाखिला देने से शिक्षा में सुधार नहीं होता है, ठीक इसी प्रकार संपूर्ण देश की फैक्ट्रियां अप्रासंगिक कानूनों एवं भ्रष्टाचार से पीड़ित हों तो नए क्षेत्र बनाने से देश का उत्पादन क्षेत्र नहीं सुधरेगा।

जरूरत थी कि श्रम–सघन एवं पर्यावरण के प्रति नरम उद्योगों को टैक्स में छूट दी जाती। ऐसा करने से रोजगार सृजन एवं पर्यावरण संरक्षण, दोनों स्वयं हो जाते। दुर्भाग्यवश इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाए गए हैं। ❑

भारी कूटनीतिक भूल

दूसरे देशों द्वारा बेचे गए सपनों के आधार पर देश का पेट भरना भारतीय नीति–नियंताओं के लिए असामान्य बात नहीं है। पाकिस्तान से निपटने के संदर्भ में भारत ने यह सोच लिया है कि इस्लामाबाद भी वही करेगा जो नई दिल्ली हमेशा करती रही है यानी नजरिया, धारणाएं और नीतियां रातों–रात बदलना। आतंकवाद को राष्ट्र नीति के औजार के तौर पर त्यागने की पाकिस्तान की कोई मंशा नजर नहीं आती। यहां तक कि अमेरिका के साथ भी वह चालें चलने से बाज नहीं आ रहा है। उधर, मनमोहन सिंह ने पाकिस्तानी सेना के आदमी के रूप में देखे जाने वाले गिलानी को शांति दूत का तमगा दे दिया।

■ ब्रह्म चेलानी

यह सर्वविदित है कि भारतीय राजनेता अपने हित साधने में तो बहुत दिलेर हैं, जबकि राष्ट्रीय हितों की पूर्ति में बेहद कमजोर। उदाहरण के लिए अब भी भारत की पाकिस्तान नीति दूरदर्शी रणनीति के बजाय उम्मीदों और अपेक्षाओं पर आधारित है। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह अब भी आतंक का निर्यात करने वाले पाकिस्तान के साथ सीमा खोलने के सपने देख रहे हैं। पाकिस्तान को लेकर भारत के ख्याली पुलाव हाल ही में मालदीव में हुए सार्क सम्मेलन में भी नजर आए, जहां मनमोहन सिंह ने पाकिस्तान के प्रधानमंत्री यूसुफ रजा गिलानी के साथ अपनी वार्ता को इस अंदाज में पेश किया जैसे वह पाकिस्तान के शीर्ष नीति नियंता के साथ की गई हो।

इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि मनमोहन सिंह से मुलाकात के बाद गिलानी ने हालिया दो घटनाओं में भारत के समर्थन के लिए आभार जताया। पहला, यूरोपीय संघ के पाकिस्तान को विशेष व्यापार रियायत देने के फैसले को वीटो न करना और दूसरा, संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में अस्थाई तौर पर पाकिस्तान के प्रवेश में सहयोग करना।

मनमोहन सिंह बदले में पाकिस्तान से कोई रियायत हासिल नहीं कर पाए, यहां तक कि भारत को सर्वाधिक तरजीही राष्ट्र के दर्जे की वास्तविक घोषणा तक नहीं हुई। भारत द्वारा पाकिस्तान को एमएफएन दर्जा देने के 15 साल बाद पिछले सप्ताह पाक मंत्रिमंडल ने भारत को एमएफएन दर्जा देने के लिए द्विपक्षीय वार्ता शुरू करने का फैसला लिया।

दूसरे शब्दों में पाकिस्तान एक ऐसे काम से वाहवाही लूटना चाहता है, जो विश्व व्यापार संगठन के नियमों के तहत उसका दायित्व है। एमएफएन दर्जे के अभाव में भारत–पाक व्यापार की सामान्य गति बाधित हो गई है और अधिकांश व्यापार संयुक्त अरब अमीरात जैसे तीसरे देश के माध्यम से किया जाता है। इससे पहले कि दोनों देशों के बीच सामान्य

विश्व व्यापार संगठन की व्यापार कमेटी में पहले भारत ने यूरोपीय संघ के इस फैसले का विरोध किया था, किंतु पिछले माह पाकिस्तान से एमएफएन दर्जा पाए बिना ही भारत ने इस आपत्ति को हटा लिया। विश्व बेहद प्रतिस्पर्धी हो गया है जहां संबंध परस्पर लेन–देन पर निर्भर करते हैं, किंतु शुरू से ही भारतीय कूटनीति अपनी गलतियों से कुछ सीखने को तैयार नहीं है।

व्यापार की शुरुआत हो पाती, भारत ने मालदीव में पाकिस्तान के साथ वरीयता व्यापार समझौता कर लिया।

पाकिस्तान के लिए यूरोपीय संघ से मिलने वाली व्यापार रियायतें बहुत अहमियत रखती हैं, क्योंकि इस कारण उसके 75 उत्पादों से तीन साल के लिए तमाम शुल्क हटा लिए गए हैं। इससे पाकिस्तान को 27 देशों के यूरोपीय संघ के बाजार में करमुक्त निर्यात के माध्यम से करोड़ों डॉलर कमाने का मौका मिलेगा।

विश्व व्यापार संगठन की व्यापार कमेटी में पहले भारत ने यूरोपीय संघ के इस फैसले का विरोध किया था, किंतु पिछले माह पाकिस्तान से एमएफएन दर्जा पाए बिना ही भारत ने इस आपत्ति को हटा लिया। विश्व बेहद प्रतिस्पर्धी हो गया है जहां संबंध परस्पर लेन–देन पर निर्भर करते हैं, किंतु शुरू से ही भारतीय कूटनीति अपनी गलतियों से कुछ सीखने को तैयार नहीं है।

दूसरे देशों द्वारा बेचे गए सपनों के आधार पर देश का पेट भरना भारतीय नीति–नियंताओं के लिए असामान्य बात नहीं है। पाकिस्तान से निपटने के संदर्भ में भारत ने यह सोच लिया है कि इस्लामाबाद भी वही करेगा जो नई दिल्ली हमेशा करती रही है यानी नजरिया, धारणाएं और नीतियां रातों–रात बदलना। आतंकवाद को राष्ट्र नीति के औजार के तौर पर त्यागने की पाकिस्तान की कोई मंशा नजर नहीं आती। यहां तक कि अमेरिका के साथ भी वह चालें चलने से बाज नहीं आ रहा है।

अगर शक्तिशाली अमेरिका अफगानिस्तान थियेटर में पाकिस्तान के कारनामों पर अंकुश नहीं लगा पा रहा है तो क्या भारत यह मान कर चल सकता है कि पाकिस्तान अपने पाले–पोसे आतंकवादियों के खिलाफ कार्रवाई करेगा?

पाकिस्तान की भारत नीति में लंबे समय से कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, जबकि भारत की पाक नीति बराबर विरोधाभासी और भ्रमित करने वाले संकेत दे रही है।

भारत के गृह सचिव ने कहा कि आतंकवादी समूहों को आधिकारिक समर्थन देने की पाक की नीति में कोई बदलाव नहीं हुआ है। इसके तीन दिन बाद ही विदेश मंत्री एस.एम. कृष्णा ने घोषणा कर दी कि पाकिस्तान के साथ अविश्वास का आधार सिकुड़ता जा रहा है। उधर, मनमोहन सिंह ने पाकिस्तानी सेना के आदमी के रूप में देखे जाने वाले गिलानी को शांति दूत का तमगा दे दिया।

पाकिस्तान के दोहरे आचरण पर अमेरिका के नए दृष्टिकोण से लाभ उठाने के बजाय नई दिल्ली ठीक उल्टा काम कर रही है। वह इस्लामाबाद की मदद के लिए आगे आ गई है और उसकी ओर से बिना किसी बाधा के बातचीत आगे बढ़ाने के गाने गाए जा रहे हैं तथा शांति का नया अध्याय आरंभ करने का संकल्प व्यक्त किया जा रहा है।

सच तो यह है कि विदेश मंत्री ने दो मित्र शक्तियों–अमेरिका और पाकिस्तान को सार्वजनिक रूप से यह सलाह भी दी कि वे अपने सभी लंबित मामलों का सौहार्द्रपूर्ण समाधान कर लें – मानो आतंकवाद भारत और पाकिस्तान के द्विपक्षीय संबंधों में कोई लंबित मसला ही न हो। इससे भी बुरी बात यह है कि भारत ने मुंबई आतंकी हमले में पाकिस्तानी सत्ता से जुड़े तत्वों की भूमिका को बिल्कुल ही किनारे कर दिया है। उसने इस संदर्भ में पाकिस्तान के न्यायिक आयोग के संभावित आगमन का स्वागत किया है।

साफ है कि भारत इस हमले के सूत्रधार माने जा रहे तत्वों को बचाने की पाकिस्तान की कोशिश में इस्लामाबाद की मदद कर रहा है। पाकिस्तान के प्रति भारत की आवश्यकता से अधिक नरमी की एक संभावित व्याख्या यह हो सकती है कि मनमोहन सिंह अपनी सरकार से संबंधित भ्रष्टाचार के मामलों से लोगों का ध्यान हटाने की कोशिश कर रहे हैं, क्योंकि घपले–घोटालों के कारण खुद उनकी विश्वसनीयता दांव पर है।

चूंकि घरेलू स्तर पर कुछ भी उनके अनुकूल नहीं हो रहा है इसलिए वह विदेशी मोर्चे पर कुछ विशेष हासिल करना चाहते हैं और अपने विदेशी दौरों की संख्या बढ़ाने के साथ पाकिस्तान के साथ कूटनीतिक रिश्तों को चर्चा के केंद्र में लाना चाहते हैं।

ऐसा लगता है कि मनमोहन सिंह शर्म अल शेख (जहां उन्होंने बलूचिस्तान को अपने एजेंडे में शामिल कर लिया था) में की गई भयंकर भूल से कोई सबक सीखने के लिए तैयार नहीं हैं और न ही वह हवाना (जहां उन्होंने आतंकवाद के निर्यातक देश को आतंकवाद से पीड़ित मान लिया था और उसके साथ साझा आतंक रोधी तंत्र की स्थापना की थी) से कुछ सीख सके हैं।

अगर भारत की पाकिस्तान के प्रति नीति भटक चुकी है तो इसके लिए केवल मनमोहन सिंह ही जिम्मेदार नहीं हैं। उनके पूर्ववर्ती अटल बिहारी वाजपेयी ने भी पाकिस्तान के संदर्भ में तदर्थ और व्यक्तित्व से प्रभावित होने वाला दृष्टिकोण अपनाकर इस नीति की आधारशिला रखी थी। ❑

पड़ताल

अमरीका डूबने की ओर. . .

अब अमरीका एक विश्व के गरीब मुल्क की शक्ल में आ गया है। दुनिया के सबसे अमीर मुल्क में 4.5 करोड़ लोग अमरीकी पैमाने के अनुसार गरीब है। अब गरीबी बढ़ने की दर 15 फीसदी तक बढ़ गई है। मध्यम वर्ग के लोगों की आय 6.4 फीसदी घटी है। 25 से 35 वर्ष के लोग 9 फीसदी रेखा के नीचे जीवन निर्वाह कर रहे हैं।

■ गिरीश अवस्थी

माननीय दत्तोपंत ठेंगड़ी ने कहा था कि जिस प्रकार विश्व में साम्यवाद स्वतः समाप्त हो गया, उसी प्रकार सन् 2015 तक आर्थिक दृष्टि से समृद्ध देश अमरीका का पूंजीवाद भी समाप्त हो जाएगा।

मा. दत्तोपंत ठेंगड़ी जी की भविष्यवाणी सच होती हुई दिखाई दे रही है। वर्तमान समय में अमेरिका की स्थिति बहुत ही दयनीय हो गई है। एक समय था जब अमरीका दुनिया को पूंजी, नई तकनीकी, निवेश आदि बांटता था। अब वही अमरीका गरीब, मंदी पीड़ित तथा कर्ज में डूबा हुआ है और वहां बेरोजगारों की फौज बढ़ती हुई दिखाई पड़ रही है।

इस समय अमरीका में न्यूयार्क, सिएटल, लांस ऐंजिल्स सहित 60–65 शहरों में बेरोजगारी से तंग होकर लोग सड़कों पर आंदोलन कर रहे हैं, जिससे राष्ट्रपति ओबामा भयभीत है।

यही नहीं अमेरिका से लेकर कनाडा, यूरोप सहित 135 शहरों के लोग भी सड़कों पर आने को तैयार है। अमरीका में रोजगारों की कमी है। अमेरिका के पास शानदार कंपनियां तो हैं, पर रोजगार चीन, भारत और थाईलैण्ड को मिल रहे हैं। देश में बेकारी गत वर्ष से 9 फीसदी पर है। वर्तमान समय में अमरीका में लगभग एक करोड़ लोग बेकार हैं, जिसमें आंशिक बेकारी को शामिल नहीं किया गया है।

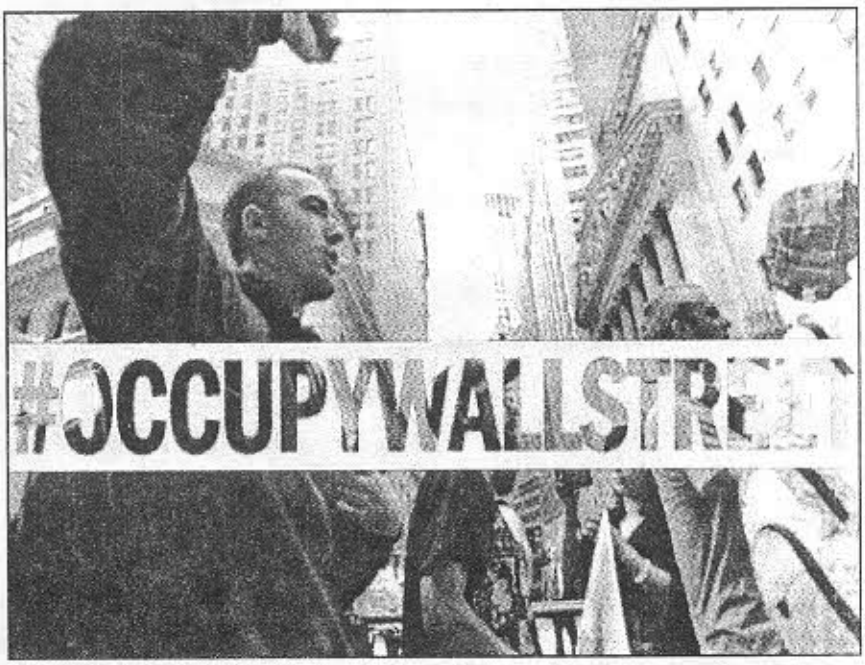

बहुराष्ट्रीय कंपनियों का जन्मदाता अमरीका ही है। अब इन्हीं कंपनियों के कारण दुनिया के 80 देशों में करीब 950 शहरों में प्रदर्शन हुए जिसके कारण पुलिस ने शिकागो से 175 व न्यूयार्क में 88 प्रदर्शनकारियों को गिरफ्तार किया। अमरीका में प्रदर्शनकारी ऐतिहासिक 'टाईम स्कवायर' पर इकट्ठा हुए और जुलूस निकाला, जिसके कारण व्यस्त मेनहट्टन की सड़कों पर भारी जाम लग गया।

बैंक ऑफ अमरीका ने भी 30,000 नौकरियां घटाई, जबकि अमरीकी सेना ने 5 वर्ष के लिए भर्तियों पर कटौती शुरू कर दी है। पिछले साल अमरीका में सवा लाख लोगों की नौकरियां गई।

अब अमरीका एक विश्व के गरीब मुल्क की शक्ल में आ गया है। दुनिया के सबसे अमीर मुल्क में 4.5 करोड़ लोग अमरीकी पैमाने के अनुसार गरीब है। अब गरीबी बढ़ने की दर 15 फीसदी तक बढ गई है। मध्यम वर्ग के लोगों की आय 6. 4 फीसदी घटी है। 25 से 35 वर्ष के लोग 9 फीसदी रेखा के नीचे जीवन निर्वाह कर रहे हैं। अमरीका के करीब 48.5 फीसदी लोग किसी न किसी तरह सरकारी सहायता पर निर्वाह कर रहे हैं। इस समय अमरीका को अधिकतम उत्पादन, रोजगार एवं राजस्व चाहिए। जबकि सरकार उल्टे

टैक्स बढ़ाने व खर्च घटाने जा रही है।

अमरीका के जीडीपी में उपभोक्ता खर्च की 60 फीसदी की हिस्सेदारी है। बेकारी बढ़ने व आय घटने से यह खर्च कम हुआ है। अमरीकी बचत करने से सदैव दूर रहे हैं।

अब मंदी व वित्तीय संकट से डरे हुए लोग बचत करने लगे है। इस समय अमरीका में जाइए तो कई रेस्टोरेंट व शोपिंग माल मंद हो चुके दिखेंगे। अमरीका में 1946 से 1964 के बीच पैदा हुए लोग अब बुढ़ापे की तरफ जा रहे हैं। इन लोगों की कमाई व खर्च की प्रवृत्ति ही अमरीका को उपभोक्ता संस्कृति का स्वर्ग बनाया था। अब ये लोग चिकित्सा, पेंशन आदि के लिए सरकार पर निर्भर है।

टैक्स देकर अमरीकी सरकार को चलाने वाली पीढ़ी अब सरकार के ऊपर ही निर्भर होने वाली है। इसके कारण अमरीकी सरकार की कमर टूट गई है। अमरीका में आंदोलन बहुत कम होते हैं किंतु अब बेकारी व महंगाई के कारण जनता आंदोलन की तरफ अग्रसर हो रही है। कर्ज संकट को दूर करने के लिए पर्याप्त कदम न उठाने के लिए यूरोपीय संघ ने अमरीकी सरकार के राष्ट्रपति ओबामा को फटकार लगाई है। उन्होंने कहा है कि अमरीकी कर्ज भी अमरीका के आर्थिक संकट का कारण है।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों का जन्मदाता अमरीकी ही है। अब इन्हीं कंपनियों के कारण दुनिया के 80 देशों में करीब 950 शहरों में प्रदर्शन हुए जिसके कारण पुलिस ने शिकागो से 175 व न्यूयार्क में 88 प्रदर्शनकारियों को गिरफ्तार किया।

अमरीका में प्रदर्शनकारी ऐतिहासिक 'टाईम स्कवायर' पर इकट्ठा हुए और जुलूस निकाला, जिसके कारण व्यस्त मेनहट्टन की सड़कों पर भारी जाम लग गया।

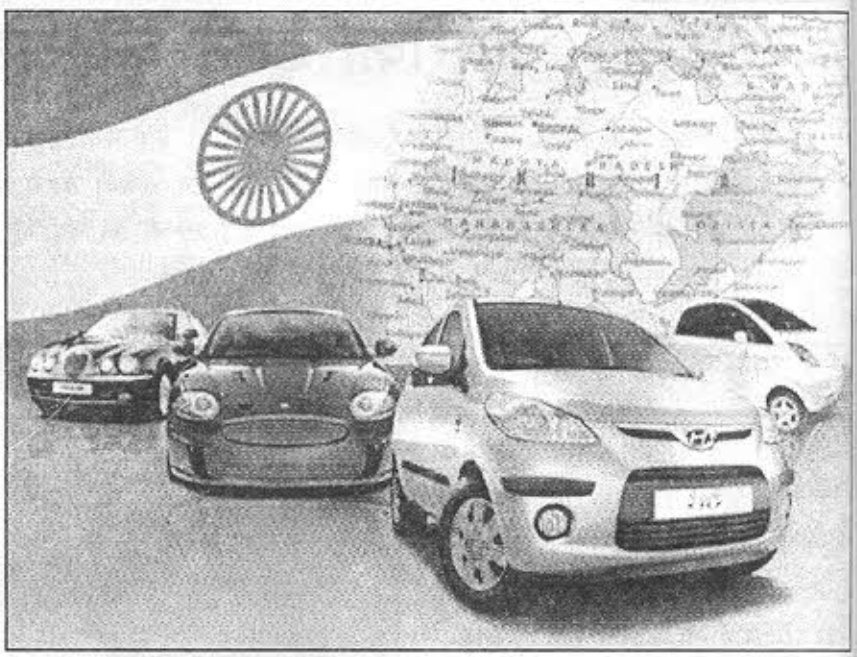

यह चिंता का विषय है कि अमरीका जो कि विश्व की आर्थिक समृद्धि का केंद्र था, उसमें बिखराव आया है। इस आंदोलन की चिंगारी अपने देश में भी आ सकती है। इसलिए राजनेताओं को इस पर गंभीर चिंतन करना चाहिए तथा देश में बढ़ती हुई बेकारी, मूल्य वृद्धि व हिंसा पर अंकुश लगाने की आवश्यकता है। यदि हमारे देश के नेता सूझ–बूझ से काम ले तो एक बार फिर भारत आर्थिक दृष्टि से मजबूत राष्ट्र के रूप में विश्व के क्षतिज पर उभर सकता है।

उसमें से कुछ प्रदर्शनकारी निकल कर वाशिंगटन की सिटी बैंक की शाखा में घुस गए और अव्यवस्था फैला दी, जहां पर पुलिस ने 24 प्रदर्शनकारियों को गिरफ्तार किया। गत दिनों लंदन, रोम, जापान व दुनिया के कई बड़े शहरों में विरोध प्रदर्शन हुए।

इस आंदोलन का नाम Occupy Wall Street आंदोलन रखा गया जो कि कारपोरेट घरानों की लूट, आर्थिक विषमता के खिलफ आंदोलन कर रहे हैं। यह आंदोलन यूरोप व एशिया के कई देशों में पहुंच गया है। यह आंदोलन अमरीकी बाजारवाद पूंजीवाद पर हमलावर है। इसकी निगाह में बैंक व शेयर बाजार गुनाहगार है।

यह चिंता का विषय है कि अमरीका जो कि विश्व की आर्थिक समृद्धि का केंद्र था, उसमें बिखराव आया है। इस आंदोलन की चिंगारी अपने देश में भी आ सकती है। इसलिए राजनेताओं को इस पर गंभीर चिंतन करना चाहिए तथा देश में बढ़ती हुई बेकारी, मूल्य वृद्धि व हिंसा पर अंकुश लगाने की आवश्यकता है। यदि हमारे देश के नेता सूझ–बूझ से काम ले तो एक बार फिर भारत आर्थिक दृष्टि से मजबूत राष्ट्र के रूप में विश्व के क्षतिज पर उभर सकता है। ❑

शिक्षा से दूर होते विश्वविद्यालय

हम राष्ट्रगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 150वीं जयंती मना रहे हैं। इस अवसर पर उनके द्वारा स्थापित शांति निकेतन की चर्चा आवश्यक है। इस विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए उन्होंने नोबल पुरस्कार में मिले धन के अतिरिक्त अपनी बीबी का जेवर तक बेंच दिया था। उनके परिवार के लोगों ने इस विश्वविद्यालय के लिए धन एकत्र करने के वास्ते कलकत्ता के रंगमंचों पर नाटकों का अभिनय किया था। पंडित जवाहरलाल नेहरू और श्रीमती इंद्रिरा गांधी जैसे राष्ट्रनायक इसके कुलपति रहे थे। अब यह शिक्षा संस्थान प्रत्येक क्षेत्र में कलंक का दंशझेल रहा है .....

■ उमेश प्रसाद सिंह

हाल ही में किए गए एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि विश्व के अग्रगण्य दो सौ विश्वविद्यालयों में भारत का एक भी विश्वविद्यालय नहीं है। इससे पता चलता है कि देश में शिक्षा का स्तर कितना नीचे है। हमारे विश्वविद्यालय शिक्षा का नहीं राजनीतिक अराजकता का केंद्र बन गए हैं।

देश कभी शिक्षा के क्षेत्र में विश्वगुरू माना जाता था। प्राचीनकाल में यहां शिक्षा का केंद्र ऋषि–मुनियों का आश्रम था। ये आश्रम बस्तियों से दूर वनांचल में नदियों के तट पर स्थापित होते थे। यहां के नालन्दा विश्वविद्यालय में दस हजार छात्रों के पढ़ने की व्यवस्था थी। यह आवासीय विश्वविद्यालय था। यहां प्रतिवर्ष एक हजार विदेशी छात्रों के नामांकन होते थे। 13वीं शताब्दी में मुस्लिम आक्रमणकारियों ने इसे ध्वस्त कर दिया। यहां के विशाल पुस्तकालय को जलाकर राख कर दिया इसके अतिरिक्त यहां तक्षशिला (अब पाकिस्तान में), विक्रमशिला (बिहार), जगदता (बंगाल), काशी (उत्तर प्रदेश), मदुराई (तमिलनाडु) आदि में स्थापित विश्वविद्यालय दुनियाभर में चर्चा का केन्द्र थे। भारत में इस समय कुल 602 विश्वविद्यालय है विश्व के किसी भी देश में इतने विश्वविद्यालय नहीं है। इनमें 90 विश्वविद्यालय निजी क्षेत्र में, 275 राज्य सरकारों द्वारा संचालित, 41 केन्द्रीय विश्वविद्यालय, 130 डिम्ब यूनिवर्सिटी और 65 स्वतंत्र विश्वविद्यालय हैं।

.हमारे यहां फर्जी विश्वविद्यालय की भी कोई कमी नहीं हैं। आए दिन कोई न कोई फर्जी विश्वविद्यालय का लेखा–जोखा अखबारों में बना ही रहता है।

सन 1948 में देश भर में कुल 11 विश्वविद्यालय थे। उनकी जो प्रतिष्ठा थी उसकी बराबरी आज का कोई विश्वविद्यालय नहीं कर सकता।

भारत में आधुनिक शिक्षा पद्धति का श्रीगणेश 28 अक्टूबर 1836 को हुई थी। इसी दिन लार्ड मैकाले की प्रेरणा से एंग्लो इंडियन कालेज बंगाल के हुगली नामक स्थान पर खुला था। भारत में अंग्रेजी शिक्षा के लिए यह एक क्रांतिकारी कदम था। इसका उद्देश्य था अंग्रेजी साम्राज्य को शक्ति देने के लिए देसी क्लर्कों की नियुक्ति। उस समय अंग्रेजों ने भारत की राजधानी कलकत्ता को बना रखा था। इसलिए अंग्रेजों ने इसी कालेज को आधार बना कर देश का पहला कलकत्ता विश्वविद्यालय की स्थापना की।

इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया के आदेश से 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के पश्चात इसकी स्थापना हुई। स्थापना समारोह में महारानी के प्रतिनिधि इंग्लैंड के तत्कालीन शिक्षा मंत्री चार्ल्स वर्ड ने उनका संदेश पढ़कर सुनाया।

वर्षों तक शिक्षा के क्षेत्र में कलकत्ता विश्वविद्यालय का बड़ा नाम था। सन

1900 तक पूर्वी भारत के सभी लगभग 150 कालेज इसी विश्वविद्यालय के अंगीभूत थे। यहाँ देश–विदेश के छात्रों को पढ़ने की होड़ लगी रहती थी।

1965 के बाद इस विश्वविद्यालय का दुर्दिन शुरू हुआ। जो विश्वविद्यालय शिक्षा का केन्द्र था वहां नक्सलवादियों और मार्क्सवादियों ने अपना अड्डा बना लिया। यहां शिक्षा का माहौल समाप्त हो गया। छात्र आन्दोलन के नाम पर छात्रों की हत्याएं हुई। असमय कालेज बंद रहने लगे। इसी कलकत्ता में 5 मार्च 1969 को हद हो गई जब उपकुलपति गोपाल सेन की हत्या उनके कार्यालय में ही कर दी गई।

उस काल में यहां सभी प्रकार की नियुक्तियां माकपा कैडर से की जाती थी। अब उनका स्थाान तृणमूल के लोग ले रहे हैं।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना 1916 में पंडित मदन मोहन मालवीय द्वारा की गई थी। मालवीय जी अनेक वर्षो तक कुलपति रहे थे। सन 1942 में यहां के कुलपति डा. राधाकृष्णन थे। उस समय वाराणसी के कलेक्टर को संदेह था कि कुछ स्वतंत्रता सेनानी, विश्वविद्यालय परिवार में छुपे हुए हैं। उन्होंने सेना की एक टुकड़ी को विश्वविद्यालय में भेजा। जब इस बात की जानकारी डॉ. राधाकृष्णन को मिली तो उन्होंने मुख्य गेट बंद करा दिया। सैनिक टुकड़ी को अंदर घुसने नहीं दिया। उन्होंने कहा कि इससे शिक्षा का स्तर खराब होगा।

अब स्थिति यह है कि यह शिक्षा केन्द्र राजनीतिक चमकाने का स्थल बन गया है। यहां खुलकर जातिवादी राजनीति होती है। यहां प्रतिदिन अपराधियों को

दिल्ली विश्वविद्यालय की स्थापना 1922 में हुई थी। यहां प्रतिवर्ष दाखिले की समस्या उत्पन्न होती है। देश के बाकी विश्वविद्यालयों से कुछ अच्छी स्थिति होने के कारण देश के अन्य राज्यों से बड़ी संख्या में छात्र यहां प्रवेश पाना चाहते हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय के विभिन्न कालेजों में छात्रों के लिए कुल 54 हजार सीटें हैं जबकि दाखिले के लिए प्रतिवर्ष लगभग डेढ़ लाख छात्र आते हैं। जाहिर है सबका दाखिला यहां संभव नहीं है।

ढूढ़ने के लिए पुलिस जवान आते हैं। जब यहां छात्र संघ का चुनाव होता है तो यदि दस हजार छात्र वोट डालने वाले होते हैं तो शांति स्थापना के लिए उतनी ही संख्या में पुलिस बल तैनात रहता है।

दिल्ली विश्वविद्यालय की स्थापना 1922 में हुई थी। यहां प्रतिवर्ष दाखिले की समस्या उत्पन्न होती है। देश के बाकी विश्वविद्यालयों से कुछ अच्छी स्थिति होने के कारण देश के अन्य राज्यों से बड़ी संख्या में छात्र यहां प्रवेश पाना चाहते हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय के विभिन्न कालेजों में छात्रों के लिए कुल 54 हजार सीटें हैं जबकि दाखिले के लिए प्रतिवर्ष लगभग डेढ़ लाख छात्र आते हैं। जाहिर है सबका दाखिला यहां संभव नहीं है।

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय एक बड़ा शिक्षण संस्थान है। इसकी स्थपना 1875 ई. में हुई थी। आजादी से पूर्व यह राष्ट्रभक्त मुसलमानों का प्रशिक्षण स्थल माना जाता था। यहां का अनुशासन अनुकरणीय था। अब यह सांप्रदायिक शक्तियों का केंद्र बन गया है।

हम राष्ट्रगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 150वीं जयंती मना रहे हैं। इस अवसर पर उनके द्वारा स्थापित शांति निकेतन की चर्चा आवश्यक है। इस विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए उन्होंने नोवल पुरस्कार में मिले धन के अतिरिक्त अपनी बीबी का जेवर तक बेंच दिया था। उनके परिवार के लोगों ने इस विश्वविद्यालय के लिए धन एकत्र करने के वास्ते कलकत्ता के रंगमंचों पर नाटकों का अभिनय किया था। पंडित जवाहर लाल नेहरू और श्रीमती इंद्रिरा गांधी जैसे राष्ट्रनायक इसके कुलपति रहे थे। अब यह शिक्षा संस्थान प्रत्येक क्षेत्र में कलंक का दंशझेल रहा है।

पश्चिम बंगाल में नक्सलियो का जंगल महल इसी क्षेत्र में है। यहां शिक्षकों की पिटाई और अपमानित करने की घटनाएं प्रतिदिन होती है। यहां स्थापित गुरुदेव की प्रस्तर प्रतिमा को नक्सलियों ने क्षतिग्रस्त कर दिया था।

बिहार के सभी विश्वविद्यालयों का खास्ता हाल था। यहां भी राजनीतिकरणों के कारण 15 वर्ष तक शिक्षा के लिए अंधकार युग रहा था। जब से नीतिश कुमार ने सत्ता संभाली है तब से विश्वविद्यालयों में कुछ रोशनी का संचार हो रहा है।

ऊपर चंद विश्वविद्यालयों की स्थिति की चर्चा की गई है। इससे अन्यों की स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। सरकार की ओर से विश्वविद्यालयों के लिए प्रतिवर्ष अनुदान दिया जाता है उसका 95वे प्रतिशत कर्मचारियों के वेतन पर खर्च होता है। पांच प्रतिशत विकास पर खर्च हाता है। इस स्थिति में शिक्षा का विकास एकदम असंभव है। ❑

जलवायु परिवर्तन पर फिर बहस

जलवायु परिवर्तन का विश्व का सबसे बड़ा विश्वासघाती अमरीका इस प्रस्ताव का विरोध करेगा। वह अपने घर में कोई सुधार नहीं करता और इस समस्या में योगदान देने वालों को जिम्मेदार नहीं ठहराता. . .प्रदूषण फैलाने वाले अन्य बड़े खिलाड़ी आस्ट्रेलिया, जापान, न्यूजीलैंड और कनाडा भी अमरीका के पिछलग्गू बने रहेंगे। डरबन पटकथा के शेष अन्य अभिनेताओं की भूमिका भी तय है।

■ सुनीता नारायण

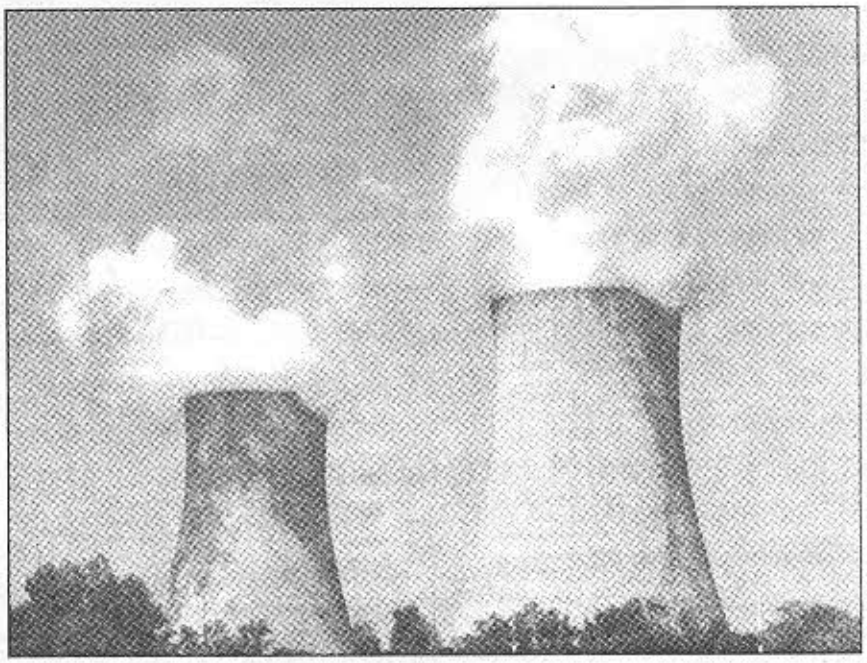

जलवायु परिवर्तन पर बहस का मौसम आ गया है। दक्षिण अफ्रीका के डरबन में जलवायु परिवर्तन पर सम्मेलन में वार्ता जोर पकड़ रही है। इसमें गरमी तो है, पर रोशनी नहीं। जलवायु परिवर्तन के स्पष्ट संकेतों के बावजूद वार्ता मझधार में लटकी हुई है। डरबन में हवा में तलवार भांजने से अधिक की संभावना दिखाई नहीं देती।

यूरोपीय संघ जलवायु चैंपियनों की अगुवाई कर रहा है। वह चाहता है कि वार्ता में तेजी लाकर कार्बन उत्सर्जन में कमी लाने के लिए एकल और कानूनी रूप से बाध्यकारी संधि की जाए। वह जोरदारी से नहीं कहता कि इसकी असल योजना क्योटो प्रोटोकोल को कबाड़ घोषित करने की नहीं है, जिसमें औद्योगिक देशों को कार्बन उत्सर्जन में आंशिक कटौती करने को कहा था।

2008–2012 तक उत्सर्जन को 1990 के स्तर से छह प्रतिशत कम करने की मांग की गई थी। इस प्रोटोकाल में समझौता हुआ था कि प्रमुख ऐतिहासिक और वर्तमान उत्सर्जक देशों को पहल करनी चाहिए और विश्व को विकसित होने के लिए पारिस्थितिक और आर्थिक स्थान छोड़ना चाहिए। इसके बाद शेष विश्व को इस रास्ते पर चलना चाहिए। विकासशील और उभरते हुए विश्व में कार्य करने के लिए प्रौद्योगिकी और धनराशि की प्रतिबद्धता भी जताई गई थी। अगर यह सिरे चढ़ जाता तो वास्तव में काम हो जाता, लेकिन यह होना नहीं था।

डरबन में विश्व किसी भी कीमत पर संधि चाहता है, किंतु इसके नुकसान से बचने के लिए होने वाला सौदा एक ऐसे सच को छिपा लेगा जिसे प्रकट करना बहुत जरूरी है – जलवायु के खतरे का सामना कर रहे विश्व में उत्सर्जन घटाने के विकल्प के ललचाने वाले फलों को पहले ही चखा जा चुका है। यह तथ्य एक ऐसे समय और असंगत नहीं हो सकता, जब विश्व दोहरे अंकों की मंदी का सामना कर रहा है. . .

अमरीका और इसके साथी क्योटो प्रोटोकाल से वाकआउट कर गए थे और अब यूरोपीय संघ भी इससे बच निकलना चाहता है। वह घरेलू स्तर पर इसकी वचनबद्धता को पूरा करना मुश्किल पा रहा है। डरबन में एक बार फिर रंगमंच सज गया है। यूरोपीय संघ पर्यावरण को बचाने के लिए त्वरित कार्रवाई और कानूनी रूप से बाध्यकारी संधि करने की बात करेगा।

जाहिर है इस पर ठंडी प्रतिक्रिया आएगा। जलवायु परिवर्तन का विश्व का सबसे बड़ा विश्वासघाती अमरीका इस

प्रस्ताव का विरोध करेगा। वह अपने घर में कोई सुधार नहीं करता और इस समस्या में योगदान देने वालों को जिम्मेदार नहीं ठहराता। वह अतीत और वर्तमान के उत्सर्जकों के बीच का भेद मिटाना चाहता है। अमरीकी कानूनी नुक्ते पर कोई बातचीत करना नहीं चाहता।

प्रदूषण फैलाने वाले अन्य बड़े खिलाड़ी आस्ट्रेलिया, जापान, न्यूजीलैंड और कनाडा भी अमरीका के पिछलग्गू बने रहेंगे। डरबन पटकथा के शेष अन्य अभिनेताओं की भूमिका भी तय है।

एसोसिएशन ऑफ स्माल आइलैंड स्टेट्स को विश्व की निष्क्रियता पर गुस्सा आना स्वाभाविक है। वह यूरोपीय संघ के साथ खड़ी होगी। दूसरी तरफ चीन और भारत अमरीका के पाले में नजर आएंगे और यूरोप के प्रस्ताव का विरोध करेंगे। बाकी देश, छोटे–मोटे मतभेदों के साथ शांति के साथ पूरा तमाशा देखेंगे और ऊंट जिस करवट बैठेगा, उधर ही हो लेंगे।

मेजबान दक्षिण अफ्रीका चाहेगा कि उसके शहर में करार पर सहमति हो जाए। इसका क्या मतलब है? किसी भी अन्य देश की तरह यह देश भी जलवायु दुविधा यानी सक्रिय हुआ जाए या नहीं, का शिकार है। इस देश का प्रति व्यक्ति उत्सर्जन बेहद ऊंचा है। करीब–करीब यूरोप के बराबर, किंतु इसे अभी भी बहुसंख्य गरीबों को आर्थिक लाभ और ऊर्जा के दायरे में लाना है। दक्षिण अफ्रीका दयावान मेजबान है और किसी भी तरह अपने मूल मित्रों भारत, ब्राजील और चीन के साथ आखिरी दावत का मजा उड़ाना चाहेगा।

ब्राजील अपनी अलग ढपली बजा सकता है। उसे अगले बड़े पर्यावरण शिखर सम्मेलन की मेजबानी करनी है

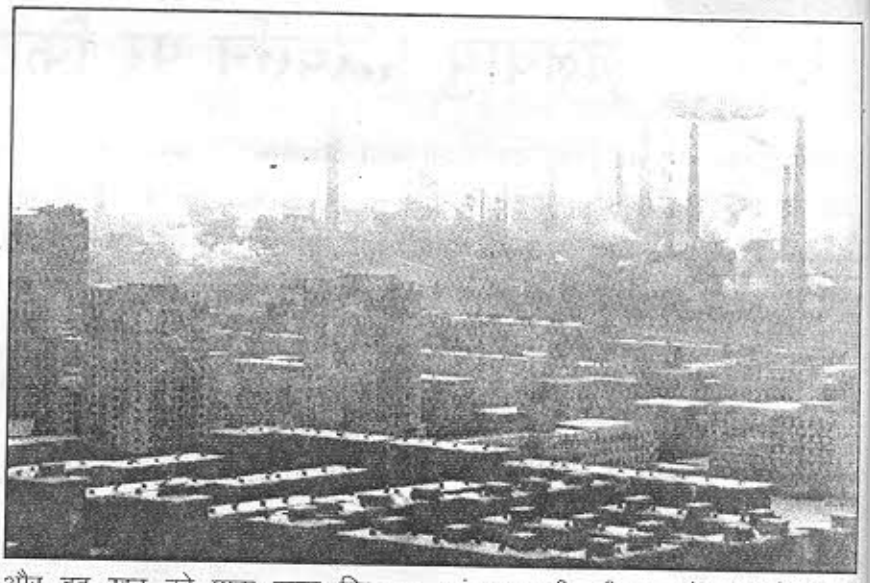

और वह खुद को पाक–साफ दिखाना चाहता है, किंतु चीन और भारत जानते हैं कि उनका बहुत कुछ दांव पर लगा हुआ है। एक बार ये देश एकल उपकरण को स्वीकार कर लेंगे तो उन्हें संसाधनों के बिना ही इनका भारी बोझ उठाना पड़ेगा। अभी सांचा बना नहीं है, किंतु नतीजा दिखाई देने लगा है।

संभावित परिणाम को कैसे बदला जा सकता है? यह तभी संभव है अगर विकासशील देश पुनर्गठित हो जाएं और नेतृत्व की कमान संभाल लें। हमारी पृथ्वी पर जलवायु परिवर्तन की बेपनाह मार पड़ रही हैं हमें जलवायु की तकलीफ पर प्रवचन देने की आवश्यकता नहीं है। हम जानते हैं कि नेतृत्व को कड़ा रुख अपनाने की जरूरत है। इसका मतलब है कि विकसित विश्व के लिए सभी उत्सर्जन कटौती का लक्ष्य रखना होगा। साथ ही यह भी महत्वपूर्ण है कि हमारी दुनिया अमरीका की हठ का समर्थन न करे।

हमें अपना पक्ष रखना चाहिए कि सीमित संसाधनों के बावजूद हम उत्सर्जन में कमी के लिए काफी कुछ कर रहे हैं। इस दिशा में हम और भी बहुत कुछ कर सकते हैं, अगर निम्न कार्बन विकास में संक्रमण की कीमत हमें चुकाई जाए। जैसी कि संभावना है, अव्यावहारिक बताते हुए इस रुख की खिल्ली उड़ाई जाएगी। अमरीका और उसके गुट के देश कहेंगे कि यह रुख हमारी लोकतांत्रिक सरकारों को जोखिम में डाल देगा और उन लोगों को आगे खड़ा कर देगा जो मानते हैं कि जलवायु परिवर्तन वास्तविक है ही नहीं।

डरबन में विश्व किसी भी कीमत पर संधि चाहता है, किंतु इसके नुकसान से बचने के लिए होने वाला सौदा एक ऐसे सच को छिपा लेगा जिसे प्रकट करना बहुत जरूरी है – जलवायु के खतरे का सामना कर रहे विश्व में उत्सर्जन घटाने के विकल्प के ललचाने वाले फलों को पहले ही चखा जा चुका है। यह तथ्य एक ऐसे समय और असंगत नहीं हो सकता, जब विश्व दोहरे अंकों की मंदी का सामना कर रहा है और लोग खर्च कम करने के उपायों का विरोध कर रहे हैं। कोपेनहेगेन और कानकुन की तरह अगर डरबन करार भी जलवायु परिवर्तन की तरह अगर डरबन करार भी जलवायु परिवर्तन की कड़वी सच्चाई पर आधारित नहीं होगा तो इसका हम सबको खामियाजा भुगतना पड़ेगा। ❑